महिला – सशक्तिकरण

लेखक :
ब्रह्माकुमार जगदीश चन्द्र

प्रथम मुद्रण : जून, 2001 (प्रतियाँ 5,000)
द्वितीय मुद्रण : जुलाई, 2001 (प्रतियाँ 5,000)

प्रकाशक एवं मुद्रक :
साहित्य विभाग,
ओमशान्ति प्रेस, ज्ञानामृत भवन,
शान्तिवन, **आबू रोड – 307510**

पुस्तक मिलने का पता :
साहित्य विभाग,
पाण्डव भवन, **आबू पर्वत – 307501**

© कापी राइट :
प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय,
पाण्डव भवन, **आबू पर्वत – 307501**
राजस्थान, भारत ।

अमृत-सूची

1. नैतिक आध्यात्मिक शिक्षा के बिना सम्भव नहीं नारी मुक्ति आन्दोलन 7
2. मातृजाति पर समाज के उत्थान का दायित्व 12
3. नारी की निंदा 17
4. प्राचीन काल के ग्रन्थों द्वारा संचालित रीति-रिवाजों तथा मान्यताओं के परिणामस्वरूप नारी का शोषण 31
5. प्राचीन काल में नारी के प्रति वासनात्मक दृष्टिकोण और उसके परिणामस्वरूप शोषण 43
6. नारी के प्रति 'भोग्या' की दृष्टि होने से आज के समूचे समाज की दुर्दशा 52
7. वृत्ति और दृष्टि के पतन से वेश्या-वृत्ति में वृद्धि और जन-जन का चारित्रिक सर्वनाश 62
8. विवाह-रहित और बेबी-रहित वर्ष 67
9. नारी अबला है या सबला? 71
10. सन्तानोत्पत्ति – नारी की विशेषता या दुर्बलता? 78
11. मनोवैज्ञानिक एवं बौद्धिक योग्यता के दृष्टिकोण से नारी पुरुष से आगे है 82
12. क्या नारी पुरुष की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक तथा चारित्रिक दृष्टिकोण से कमज़ोर होती है? 87
13. आध्यात्मिक दृष्टिकोण से नारी पुरुष के समकक्ष 96
14. प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय द्वारा नारी मुक्ति का अनुपम कार्य 104

दो शब्द

इस वर्ष को, संयुक्त राष्ट्र संघ की ओर से तथा भारत वर्ष में भी महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है। इसके फलस्वरूप देश-विदेश में समाचार-पत्रों-पत्रिकाओं तथा सार्वजनिक प्रसार माध्यमों ने इससे सम्बन्धित समाचारों, लेखों, वार्ताओं, विवेचनाओं, सामाजिक गतिविधियों तथा विभिन्न दृष्टिकोणों को प्रस्तुत करके इसे परिवार से लेकर संसद तक चर्चा का विषय बना दिया है। विश्व की आधी जनसंख्या की समस्याओं पर चर्चा का वातावरण बनाना और उनके स्तर को कम-से-कम सामान्य तक ले आने की दिशा में यह एक सराहनीय प्रयास है।

व्यक्ति-निर्माण से लेकर **विश्व-निर्माण** तक महिलाओं के महत्त्व और भूमिका को हम सभी अच्छी तरह से जानते हैं। परिवार, जो कि समाज की सबसे बड़ी इकाई है, चाहे संयुक्त हो या एकाकी, उसकी जीवन पद्धति तथा सामाजिक व्यवहार उस परिवार की प्रमुख महिला के संस्कारों से प्रतिबिम्बित होते हैं। परिवार के हर सदस्य के संस्कारों को परिष्कृत करने की प्रत्यक्ष या परोक्ष जिम्मेवारी उसी पर होती है। इतिहास साक्षी है कि विश्व के महान्-से-महान् चरित्रों चाहे **महाराजा शिवाजी** हों या **लाल बहादुर शास्त्री, महात्मा गाँधी हों** या **लाला लाजपत,** इन सभी को गढ़ने में माताओं (महिलाओं) का ही सबसे बड़ा हाथ रहा है। नारी, सेवा, ममता, कल्याण, त्याग और उच्च मूल्यों की सजीव प्रतिमा है। वर्तमान दौर में उसके जीवन को यदि ध्यान साधना और अभ्यास का सम्बल देकर विकसित और परिष्कृत कर दिया जाए तो उसके स्नेह, संग में विनयशील, निस्वार्थी, कर्त्तव्यनिष्ठ और विशाल दृष्टिकोण वाले उदारमना व्यक्ति निर्मित हो सकते हैं। आज इसी की आवश्यकता है। इसके लिए **नारी का आध्यात्मिक और नैतिक सशक्तिकरण** चाहिए। आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक सशक्तिकरण तो नैतिक सशक्तिकरण की परछाई मात्र हैं।

सदियों से शोषित नारी के लिए सशक्तिकरण एक प्रकार से घाव पर लगाई जाने वाली मलहम है परन्तु मलहम तभी काम करती है जब पहले घाव को पोंछ दिया जाए। मवाद से ढके घाव पर मलहम कोई असर नहीं करती। नारी के प्रति 'अबला', 'भोग्या' और 'दूसरे दर्जे की' इस प्रकार का दृष्टिकोण और धर्मशास्त्रों

में उसको अपमानित करने वाले, निन्दा सूचक तथा अन्यायकारी शब्द और वाक्य ही वह मवाद है जिसका पोंछा जाना आवश्यक है ।उदाहरण के लिए उसे **नरक का द्वार** कहना उसके साथ घोर अन्याय ही तो है जबकि नर-नारी दोनों मिल कर ही नरक का द्वार बनते हैं। पुरानी मान्यताओं के साथ-साथ वर्तमान काल की भौतिकवादी आँख ने भी नारी के ईश्वरीय गुणों को पहचानने के बजाए उसे विज्ञापन का साधन तथा उसकी शारीरिक सुन्दरता को निम्न स्तर की कमाई का साधन बना दिया है। उसका स्थान-स्थान पर शारीरिक शोषण होता है और वह स्वयं भी अपनी अस्मिता को भूल, पुरुष के कामी हथकण्डों का शिकार होकर वासना की गुड़िया बन गई है।

पुनश्च, बहुत दिनों से दबी हुई नारी – वृत्ति स्वतन्त्रता का अर्थ उच्छृंखलता ले बैठी है। इसके परिणामस्वरूप, स्वच्छ समाज के स्थान पर एक स्वच्छन्द समाज का वातावरण बनने लगा है।सरकारी कानूनों ने भी वासनात्मक भावभंगिमाओं की, कला के नाम पर स्वीकृति देकर आग में घी का काम किया है।फिर वर्तमान काल के कुछ चिन्तकों जैसे फ्रायड ने कहा कि – मनुष्य हर कार्य **काम-प्रेरित** होकर करता है – इससे नारी देह के प्रति पूज्या के स्थान पर भोग्या का गलत दृष्टिकोण समग्र रूप से पनपने लगा है। कई मनोवैज्ञानिकों, लेखकों, चिन्तकों ने पूर्वाग्रहों से ग्रसित होकर नारी को शारीरिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक, आध्यात्मिक आदि स्तरों पर पुरुष की भेंट में निम्न स्तर की होने की **भ्रान्त-धारणाओं** को प्रचलित किया जिसके कारण समाज ने सचमुच ही उसे निम्न दर्जे की और दूसरे दर्जे की घोषित कर दिया इन तथा अन्य भी बहुत-सी बातों को जब तक वैज्ञानिक और निष्पक्ष आधार के द्वारा सही रूप में न जाना जाए, जब तक हमारी मान्यताएँ नहीं बदल सकती और जब तक मान्यताएँ नहीं बदलती तब तक दृष्टिकोण नहीं बदलता और जब तक दृष्टिकोण नहीं बदलता तब तक सशक्तिकरण हो नहीं सकता।

इस पुस्तक में इन सभी **भ्रान्त-धारणाओं** का निष्पक्ष भाव से, वैज्ञानिक आधार पर खुलासा किया गया है और साथ-साथ **नारी सशक्तिकरण** का सर्वांगीण पहलू भी प्रस्तुत किया गया है। भारत के सम्बन्ध में सशक्तिकरण का अर्थ है कि अब नारी नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त करके **पुरुषत्व-भाव**

में गुलाम बने रहना छोड़े, वह उसे सहयोग दे **योगिनी** बन कर, उससे सहानुभूति करे ईश्वरानुभूति करके, उसके साथ मिल कर गृहस्थी चलाए, **गृहस्थ को आश्रम** मान कर। वह **कामिनी के बजाए कल्याणी बने और अबला के बजाए शक्तिरूपा** बने।

हमें यह बताते हुए गौरव का अनुभव हो रहा है कि **महिला सशक्तिकरण** का कार्य प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय पिछले 65 वर्षों से बड़े प्रभावी ढंग से कर रहा है। इस संस्थान का यह मानना है कि नर और नारी, गृहस्थ रूपी रथ के ही दो पहिये हैं, अत: यदि दोनों ही दिव्यता और योग के मार्ग को अपनाएँ तो अति उत्तम होगा। दोनों एक-दूसरे के **सहयोगी तो हों, पर उनमें खींचतान न हो।** पारस्परिक अगाध आत्मिक स्नेह और सम्मान भावना तो हो पर आसुरी वृत्तियों का, शोषण का और एक दूसरे के प्रति वासना का स्थान न हो। आध्यात्मिक शिक्षा के द्वारा इस विद्यालय द्वारा किया जाने वाला नारी और नर की बराबरी का यह कार्य देखने योग्य है। इसका उद्देश्य, ठीक सामाजिक मूल्यों की स्थापना करना है, जिससे नारी श्री लक्ष्मी के समान और नर श्री नारायण के समान स्तर को प्राप्त करें।

आशा है कि पाठकगण इसे पढ़ कर नारी के प्रति अपने विचारों को बदलेंगे। स्वयं नारी भी नारी के प्रति और अपने प्रति अपने दृष्टिकोण को बदलेगी। इस प्रकार दिव्य आदर्शों को जीवन में धारण कर, नारी और नर दोनों के लिए कल्याणकारी और स्वच्छ समाज के निर्माण में सभी सहयोग दे सकेंगे।

– ब्र.कु. आत्म प्रकाश

नैतिक आध्यात्मिक शिक्षा के बिना सम्भव नहीं नारी मुक्ति आन्दोलन

पिछले कुछ वर्षों से पाश्चात्य देशों में ''नारी मुक्ति आन्दोलन'' (Women Liberation Movement) नाम से एक आन्दोलन बड़े ज़ोरों से चलता आ रहा है। यह जेहाद विश्व के सर्वाधिक विकसित माने जाने वाले देश – अमेरिका में सन् 1969 में इस नारे को लेकर शुरू किया गया था कि नारी को पुरुषों के समान ही सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक स्तर (Status) प्रदान किया जाय, नारी को दूसरी श्रेणी का नागरिक मानने की प्रथा का अन्त किया जाय तथा उसे अब तक जो 'अबला' मानने का और 'बच्चे पैदा करने की मशीन' मानने का रवैया पुरुष अपनाते चले आये हैं उसे बदला जाय।

इस आन्दोलन की नींव

वास्तव में इस आन्दोलन की नींव तो सन् 1963 में ही पड़ गई थी क्योंकि उस वर्ष बैटी फ्रीडन (Betty Friedan) की एक क्रान्तिकारी पुस्तक – 'द फैमीनाइन मिस्टिक' (The Feminine Mystique) प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक में बैटी फ्रीडन ने महिलाओं को झकझोरते हुए कहा है कि – ''जो जीवन अब आप जी रहीं हैं यह आपके सम्मान-योग्य नहीं है। आप पुरुष के लिये ही अपना जीवन गुज़ार देती हैं, उसी की इच्छाओं की दासी बन कर चलती हैं, उसी की प्रसन्नता के लिये ही स्वयं को संवारती और सजाती हैं, मानो आपका अपना अलग, स्वतन्त्र कोई जीवन ही नहीं है!'' इसमें स्पष्ट किया गया कि नारी वास्तव में कमज़ोर नहीं है, वह पुरुष से किसी बात में कम योग्य नहीं है। पुरुष नारी को आगे बढ़ने के अवसर तो देता नहीं और उसने वातावरण, रीति-रिवाज इत्यादि ऐसे बना रखे हैं कि नारी उसको ही अपना सारा जीवन दे डाले और फिर इस पर भी पुरुष कहता है कि नारी अबला है, कमज़ोर है।

इस प्रकार, बैटी फ्रीडन ने महिलाओं को पुरुषों से मुक्त होने की सलाह दी। उसने नारियों को राय दी कि वे आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करें; वे हर प्रकार का काम करके पुरुषों को यह दिखा दें कि उनमें क्या योग्यता है। बैटी की इस ज़ोरदार

ललकार से वहाँ के नारी-समाज में एक हलचल मच गई और वहाँ उसके नेतृत्व में एक संस्था कायम हो गई जिसका नाम रखा गया : ''द नेशनल आर्गेनाइजेशन आफ विमेन'' (The National Organisation of Women)। उसने 'नारी मुक्ति आन्दोलन' की मुहिम जारी कर दी।

इस आन्दोलन की अन्य अग्रगणी महिला नेताएँ

इस आन्दोलन को बल प्रदान करने वाली बहुत-सी बुद्धिजीवी नारियाँ रहीं जैसे'मार्ग्रेट मीड' (Margaret Mead), 'साइमन डि ब्योवाइर' (Simon de Beauvoir) तथा अन्य। साइमन ने इस आन्दोलन को यह सिद्धान्त दिया कि व्यक्ति के जीवन की सफलता वास्तव में स्वतन्त्रता प्राप्ति में है। एक अन्य प्रसिद्ध महिला 'जरमेन ग्रीयर' (Geremaine Greer) ने भी नारियों को यही सुझाव दिया कि – ''अपनी जीवन-शक्ति को किसी मन-पसन्द काम में लगाओ, पुरुष के समान होकर चलो और स्वयं में स्वमान तथा आत्मविश्वास लाते हुए इस संग्राम में भाग लो। स्वयं को दूसरों पर आश्रित करके, दीन बन कर मत चलो बल्कि धरती पर स्वतन्त्रता से कदम बढ़ाओ, स्वतन्त्रता आपका जन्म-सिद्ध अधिकार है।''

पुरुष का नारी के प्रति ग़लत दृष्टिकोण

इसी आन्दोलन की एक प्रमुख नेता 'मिस काटे मिल्लेट' (Miss Kate Millet) ने एक किताब लिखी, जिसका शीर्षक है 'सैक्सुअल पॉलिटिक्स' (Sexual Politics)। मिस मिल्लेट का कहना यह है कि नारी का पुरुष द्वारा दुरुपयोग किया गया है, उसका अपमान किया गया है और उसे दूसरी श्रेणी का अथवा घटिया माना गया है। मिस मिल्लेट ने वर्तमान समय नारी का समाज में जो स्थान है, उसका विषद् चित्रण इस पुस्तक में किया है। उन्होंने आजकल के साहित्य को लेकर, उसका विश्लेषण करके स्पष्ट किया है कि पुरुष नारी को 'भोग्या' मान कर तथा उसे घटिया और स्वयं को उच्च मान कर उससे व्यवहार कर रहा है। मिस मिल्लेट ने जिन प्रसिद्ध लेखकों की कृतियों का ऐसा विश्लेषण किया है, उनमें से एक हैं अमेरिका के प्रसिद्ध लेखक नार्मन मेलर (Norman Mailer), जिनके एक उपन्यास का नाम है – 'An American Dream' 'एक अमेरिकी स्वप्न'।

इसकी कथावस्तु इस प्रकार है कि एक प्रोफेसर ने अपनी पत्नी को मार डाला और फिर अपनी नौकरानी से कैसे व्यवहार किया। मिस मिल्लेट ने इस प्रोफेसर के रवैये का हवाला देते हुए कहा है कि पुरुषों का नारियों से ऐसा ही अधिकार-पूर्ण, तानाशाही का-सा व्यवहार होता है। मिस मिल्लेट ने और भी बहुत-से उपन्यासकारों तथा लेखकों की कृतियों, जिनमें कि हेनरी मिल्लर (Henry Miller), डी० एच० लारेन्स (D.H. Lawrence) और जीन जेनेट (Jeen Genet) शामिल हैं, का भी विश्लेषण किया है और दिखाया है कि ये सब किस प्रकार नारी को एक वासना की गुड़िया मानते हैं, विशेषकर डी० एच० लारेन्स के कुख्यात उपन्यास 'लेडी चेटरलीस लवर' (Lady Chatterley's Lover) का ऐसा दृष्टिकोण तो लोक-प्रसिद्ध है।

इस आन्दोलन के परिणाम

नारी मुक्ति आन्दोलन का एक यह लाभ तो प्रत्यक्ष रूप में हुआ कि जगह-जगह, देश-विदेश में, नारी को समानाधिकार दिये जाने की चर्चा शुरू हो गई। पत्रों-पत्रिकाओं ने तथा सार्वजनिक प्रसार माध्यमों (Mass Media) ने भी तत्सम्बन्धी समाचारों का प्रसार करके तथा इस विषय पर लेखों या वार्ताओं इत्यादि के द्वारा जनता में इसे चर्चा का विषय बना दिया। इन सबके परिणामस्वरूप अमेरिका में महिलाओं से सम्बन्धित कुछ कानून बनाये गये और नारी जाति को कुछ सुविधाएँ भी दी गईं। एक पत्रिका 'बिजीनेस वीक' (Business week) ने इस विषय में एक सर्वेक्षण करके बताया कि इस आन्दोलन के तीन वर्षों के बाद अमेरिका में महिलाओं को काफी उच्च एवं महत्त्वपूर्ण पद दिये गये; उनमें कई ऐसे पद भी शामिल हैं जिन्हें पहले केवल पुरुषों ही को दिया जाता था। इसी प्रकार, पुरुषों और स्त्रियों के 'बराबर काम के लिये बराबर वेतन' की जो माँग है उसे पूरा करने के लिए भी कई देशों की सरकारें तत्सम्बन्धी कानून बनाने पर विचार कर रही हैं। कई जगह कानून बने भी हैं, परन्तु उन्हें सही रीति से निभाया नहीं जाता है। पुनश्च, विवाह से पहले जिन कन्याओं के बच्चे पैदा हो जाते हैं, उन्हें संभालने के लिये सरकारी व्यवस्था किये जाने या ऐसी महिलाओं को गर्भ-पात (Abortion) का

पूर्णाधिकार देने सम्बन्धी भी कई देशों में कदम उठाये गये हैं।

परन्तु प्रश्न उठता है कि क्या इन सबसे नारी मुक्ति हो गई है? क्या नारी को गर्भपात की कानूनी छूट देने, उसके अवैध बच्चों को संभालने की सरकारी व्यवस्था करने या उसे नौकरी में पुरुष के बराबर वेतन देने तथा उसे राजनीतिक पद देने से नारी मुक्ति का उच्च उद्देश्य पूरा हो जायेगा? वास्तव में सारी समस्या का मूल तो यह है कि पुरुष नारी को 'भोग्या' मान कर उससे कलुषित एवं शोषणात्मक व्यवहार करता आया है; वह उसके प्रति वासनात्मक दृष्टि अपनाता आया है। उस दृष्टिकोण में तो कोई परिवर्तन हुआ ही नहीं। ऊपर हम 'मिस मिल्लेट' (Miss Millet) द्वारा कुछ प्रसिद्ध लेखकों के उपन्यासों इत्यादि के विश्लेषण की चर्चा कर आये हैं। हम बता आये हैं कि उस विश्लेषणात्मक शैली द्वारा मिस मिल्लेट ने यह सिद्ध किया है कि अब भी पुरुष नारी को 'विषय-वासना की गुड़िया' (Sex Doll) ही मान कर उससे कुत्सित व्यवहार करता आ रहा है। पुरुष की इस पुरानी आदत में तो सुधार हुआ ही नहीं। नारी को थोड़े से उपरोक्त अधिकार मिल गये तो क्या हुआ? आज मिस मिल्लेट द्वारा विश्लेषण किये गये उपन्यासों से अधिक भद्दे नावल तो छप ही रहे हैं; फिल्मों में वैसे ही हीरोइन (Heroine नायिका) का 'रोल' (Role) होता है; पुरुष (हीरो) उसे वासना-भोग की वस्तु मान कर ही उसे पाने के लिये संघर्ष करते हैं। वैसा ही दृष्टिकोण लिये हुए महिलाओं के नग्न या अर्द्ध-नग्न चित्र छपते हैं। गर्भपात (Abortion), अवैध बच्चों की संभाल, प्रसूति के समय डाक्टरी सुविधाओं इत्यादि की व्यवस्था हो जाने से 'नारी की मुक्ति' हुई – यह कैसे माना जाय? अवैध बच्चों की छूट और परिवार-नियोजन के लिये उपलब्ध कृत्रिम साधनों से तो नारी पुरुष के हाथों और भी ज्यादा ही शोषित हुई है और होगी। इससे तो वह पुरुष की छल-विद्या का और अधिक शिकार होगी और उसका और भी ज़्यादा दुरुपयोग होगा? नारी मुक्ति को वासना-भोग की स्वच्छन्दता मान लेना या आर्थिक तथा राजनीतिक पद प्राप्त होने से इस लक्ष्य की सिद्धि मान लेना तो गोया इस मुक्ति आन्दोलन की पवित्रता और इसके महत्त्व का ही जनाज़ा निकलने के तुल्य होगा। 'नारी मुक्ति' के लक्ष्य की सिद्धि तो नारी की नैतिक एवं मानसिक मुक्ति से तथा पुरुष और नारी के बीच

वासनात्मक, शोषणात्मक सम्बन्धों ही को सुधारने से होगा और इस कार्य की सफलता सही मूल्यों को तथा पवित्र दृष्टिकोण को स्थापित करने से हो सकती है और इसके लिए शिक्षा (education), जिस द्वारा ऐसे मूल्यों को प्रदान किया जाय, की ज़रूरत है। ऐसी प्रभावोत्पादक आध्यात्मिक-नैतिक शिक्षा के बिना 'नारी मुक्ति' सम्भव नहीं है।

मातृजाति पर समाज के उत्थान का दायित्व

परिवार समाज की सबसे बड़ी इकाई है। परिवार संयुक्त हो या एकाकी – उसकी आन्तरिक रीति-नीति, सामाजिक व्यवहार और उसकी जीवन पद्धति का स्वरूप उस परिवार की प्रमुख महिला के संस्कारों से ही प्रतिबिम्बित और निर्मित होता है। परिवार के छोटे से बड़े तक को संस्कारों से परिष्कृत करने का प्रत्यक्ष और परोक्ष दायित्व परिवार की प्रमुख मातृशक्ति पर आ पड़ता है। ऐसा लगता है कि परमपिता शिव ने समस्त विश्व में मातृ जाति पर ही यह दायित्व देकर उन्हें पृथ्वी पर भेजा है कि वे अपनी श्रम शक्ति, सेवा भावना, निष्ठा और सहिष्णुता से परिवार के लोगों में चरित्र के उदात्त गुणों का बीजारोपण करें और अपने अलौकिक स्नेह की शीतल छाया में, उन गुणों का विकास करने का, परिवार के लोगों को अवसर दें।

मातृशक्ति और मातृजाति ने अपने अन्तर मन की दृढ़ निष्ठा और संकल्प शक्ति से जहाँ-जहाँ स्वयं अपने में उदात्त गुणों की स्थापना की है और परिवारों में जहाँ उनका व्यवहारिक कार्यान्वयन किया है – वहाँ-वहाँ उस परिवार के छोटे-बड़े सभी लोगों में श्रेष्ठ गुणों का निरन्तर विकास हुआ है। इतिहास इस सत्य का सबसे बड़ा साक्षी है कि विश्व के महान-से-महान चरित्रवान व्यक्तियों के चरित्र को गढ़ने, बनाने में उस परिवार की माताओं का सबसे बड़ा हाथ रहा है। चाहे वह महाराजा शिवाजी रहे हों या लाल बहादुर शास्त्री और चाहे वह महात्मा ध्रुव रहे हों या गोरा बादल और चाहे वह ईश्वरचन्द्र विद्यासागर हुए हों या लाला लाजपत राय– उन सबके चरित्रों को उनकी माताओं के चरित्रों की दृढ़ता, निष्ठा, संकल्प और लक्ष्य-सिद्धि के संस्कारों ने ही महान उपलब्धियों की ओर प्रेरित किया था।

मातृजाति के विशेष गुण

मातृजाति सेवा की जीवन्त प्रतिमा है, उसके ममत्व का कहीं अन्त नहीं होता। उसके पास सबके कल्याण की कामना है। वह किसी का अहित नहीं सोचती। स्वयं उसका व्यक्तिगत हित और उसका व्यक्तिगत स्वार्थ परिवार में नगण्य हो जाता है और अपने व्यक्तिगत सुख और स्वार्थ की भावना को त्याग कर जो पूरे परिवार

के मंगल और हित के लिये नि:स्वार्थ भाव से समर्पित है उस माता का चरित्र ''सर्वजनहिताय'' एक आदर्श चरित्र है। यदि परिवार की किसी माता की संस्कृति अर्थात् उसकी जीवन पद्धति को ध्यान, साधना और अभ्यास के द्वारा और अधिक विकसित या परिष्कृत कर दिया जाये तो उस माता के प्रभाव से परिवारों में मनुष्यता के श्रेष्ठ गुणों का और उच्च कोटि के चरित्र का निर्माण और विकास होते देर नहीं लगती।

किसी नीतिकार ने कहा है कि हे मनुष्य! यदि कभी कहीं तेरा धन खो जाये तो यही समझना कि तेरा कुछ भी नहीं गया है, यदि तेरा स्वास्थ्य बिगड़ने लगे तो समझना कि तेरा कुछ खो गया है और यदि तेरा चरित्र विनिष्ट हो जाये तो समझ लेना कि तेरा सब कुछ चला गया है।

आज हमारे समाज का चरित्र अर्थात् राष्ट्रीय चरित्र विनष्ट हो गया है। नीतिकार के ये वाक्य शाश्वत् सत्य हैं। युगों से यह पुनरावृत्त हुए हैं और सैंकड़ों-हज़ारों ने इन महावाक्यों से प्रेरणा लेकर अपना चरित्र ऊंचा उठाया और उसकी सुरक्षा की है।

लेकिन प्रश्न यह है कि धन और तन से जिस चरित्र को नीतिकार ने अधिक महत्त्व दिया है उस चरित्र के व्यवहारिक स्वरूप की रूप रेखा किस प्रकार निर्धारित की जाए कि जो सामान्य जन के लिये भी ग्राह्य हो जाए और प्रत्येक परिवार, घर और व्यक्ति उसका उपयोग अपने दैनिक जीवन में थोड़े से प्रयास के बाद कर सके।

'चरित्र' किसे कहते हैं?

यों तो नीतिशास्त्र, दर्शन शास्त्र और धर्म-शास्त्र ने चरित्र की व्याख्या और परिभाषायें विभिन्न स्तरों पर विभिन्न प्रकार से की हैं लेकिन उन सबका निष्कर्ष इस प्रकार है कि –

(क) व्यक्ति अपनी समस्त व्यक्तिगत आदतों पर अपना पूरा-पूरा नियंत्रण रखे।

(ख) व्यक्ति लोगों से व्यवहार करते समय अपने आवेग, संवेग और सह्य

वृत्तियों पर नियंत्रण रखे और वह अपने दृष्टिकोण को व्यापक बनाए और उसका चिन्तन केवल उसके स्व तक सीमित न रहे।

(ग) व्यक्ति किसी भी क्रिया पर अपने भीतर उठने वाली प्रतिक्रिया को सन्तुलित रखे।

(1) व्यक्ति की व्यक्तिगत आदतों में, प्रात: ब्रह्मकाल में उठने से लगा कर रात्रि के सोने तक की उसकी सभी व्यक्तिगत आदतों का समावेश हो जाता है। व्यक्ति की आदतों में संयम-नियम को प्रधानता दी जाए और आदतों में निष्ठा, विनय, नियमितता, अनुशासन, दृढ़ता, पवित्रता, उच्चता, सम्पूर्णता, श्रमशीलता और उदारता के समावेश से व्यक्ति के व्यक्तित्व का उच्च स्तर पर निर्माण होता है।

चरित्र का दूसरा पहलू और कार्य निर्माण और उसमें माताओं का स्थान

किसी भी परिवार में, परिवार की माताएं यदि स्वयं अपने साथ थोड़ी निर्भय होकर, अपनी आदतों में अनुशासन, श्रमशीलता, नियमितता और पवित्रता को स्थान देना शुरू कर दें तो केवल मात्र वातावरण के प्रभाव से यह संस्कार सारे परिवार के सभी छोटे-बड़ों में अंकुरित और विकसित होते देर नहीं लगा सकते। गृह-संचालिकाएं यदि इन संस्कारों से मण्डित हों तो वे सख्ती के साथ अर्थात् दृढ़ निश्चय पूर्वक परिवार के लोगों से इन नियमों का पालन करवाने की परम्पराएं डाल सकती हैं।

(2) व्यक्ति के चरित्र का दूसरा पहलू है किसी दूसरे व्यक्ति या समाज के साथ उसके सम्पर्क के समय किया जाने वाला उसका व्यवहार। विनयशीलता इस पक्ष का आधार है। व्यक्ति यों तो अहम्, देहाभिमान, ईर्ष्या, द्वेष, आवेश, उत्तेजना और असुहिष्णुता से भरा हुआ है और भावनाओं के इन तारों को थोड़ा-सा भी स्पर्श मिलते ही ये सब विकार एक साथ झनझना उठते हैं। लेकिन चरित्रवान व्यक्ति वही है जो लोक-व्यवहार में अपनी इन आसुरी वृत्तियों को पूरी तरह से नियंत्रण में रखे और कैसी भी परिस्थिति में अपने आपको आवेग संवेग और

उत्तेजना से प्रभावित न होने दे, न अपने में हीनता, क्षुद्रता या लघुता का अनुभव करे और न अपनी आवेश पूर्ण अहंकारी वृत्तियों से दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयत्न करे और स्व-केन्द्रित होकर अपनी स्वार्थ पूर्ति में निम्नतम् स्तर पर न उतर आए। व्यक्ति अपने में सहिष्णुता के गुणों को विकसित करे और छल, कपट, द्वेष और ईर्ष्या जैसे दुर्गुणों से मुक्त होकर प्रत्येक विषय पर एक सत्यनिष्ठ की तरह न्याय संगत और तर्क संगत तरीके से व्यवहार करे। व्यक्ति एक-दूसरे के प्रति अपने व्यवहार में सद्भावना की स्थापना करें और सह अनुभूति से विचार करें।

व्यवहार पक्ष में चरित्र का यह स्वरूप अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और चरित्र के इस व्यवहार पक्ष की दुर्बलता के कारण ही समाज में हिंसा, प्रतिहिंसा, द्वन्द, प्रतिद्वन्द और एक-दूसरे के प्रति बढ़ते हुए अविश्वास के परिणामस्वरूप विघटन की स्थिति आती है।

लेकिन यदि छोटे बालकों से लेकर बड़ों तक को, चरित्र के व्यवहारिक पक्ष को परिष्कृत रूप में ग्रहण और धारण करने के संस्कार प्रतिदिन घरों, परिवारों में मिलते रहें तो निश्चय ही समाज को विघटन और ध्वंस से बचाया जा सकता है।

परिवार की माताओं पर ही यह दायित्व भी आकर पड़ता है कि वे घरों में स्वयं अपने उदात्त चरित्र और आदर्श व्यवहार से घर के सभी लोगों में नि:स्वार्थ कर्म, विनय, सद्भावना, सहानुभूति और समता की भावना को विकसित करें और खुली आँखों से घर के छोटे से बड़े तक सभी के पारस्परिक व्यवहार को देखें, परखें और उन्हें उचित दिशा-बोध दें। परिवार की माताओं ने जब-जब भी और जहाँ-जहाँ भी इस दायित्व की महत्ता को समझ कर कठोरता के साथ अपने परिवार में इसका कार्यान्वयन किया है वहीं उस परिवार ने देश को अत्यन्त विनयशील उच्चाभिलाषी, नि:स्वार्थी, कर्त्तव्यनिष्ठ, विशाल दृष्टिकोण वाले और उदारमना व्यक्ति प्रदान किये हैं।

चरित्र का तीसरा पहलू

(3) व्यक्ति के चरित्र का तीसरा पहलू है – किसी क्रिया के कारण उसके भीतर होने वाली प्रतिक्रिया से।

चरित्र का यह पहलू प्रत्यक्षत: भावनाओं से सम्बन्ध रखता है। भावनाओं की तरंगों से प्रभावित होकर व्यक्ति आँधी में उड़ने वाले पत्ते की तरह हो जाता है, भावनाओं के संवेग पर नियंत्रण रखे बिना वह किसी भी वक्त अपना आपा खोकर आवेश, क्रोध और हिंसा जैसी दुष्प्रवृत्तियों का शिकार हो सकता है। किसी भी क्रिया पर होने वाली अपनी प्रतिक्रिया को सन्तुलित करने के लिए व्यक्ति को सहिष्णु और सहनशील होना पड़ता है और अपने भीतर उठने वाले क्रोध के आवेश को रोकना पड़ता है। आवेग, उत्तेजना, प्रलाप, क्रोध, संवेग और हिंसा-प्रतिहिंसा, उत्तेजना आदि दुर्गुणों का प्राबल्य व्यक्ति में बढ़ जाता है, यदि वह अपने में होने वाली प्रतिक्रिया की शक्तियों को नियंत्रित नहीं करे।

घर परिवार की माताओं का यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण दायित्व है कि वे अपने मस्तिष्क की शक्तियों को सन्तुलित रखते हुए घर के सभी छोटे-बड़ों को, भावनाओं पर नियंत्रण करना सिखायें।

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय ने इसलिये परिवार को महत्त्वपूर्ण इकाई मान कर ही उसे अपने कार्य-क्षेत्र की सीमा में लिया है और हमारे कार्यक्रम का सबसे बड़ा भाग, परिवार की माताओं में इस प्रकार सर्वांगीण, चरित्र निष्ठा के संस्कार जगाना, उनका अभ्यास कराना और उन में उन्हें निपुण करना है कि जिससे आगे जाकर वे अपने परिवार के लोगों के स्वरूप, उनके मस्तिष्क और उनकी भावनाओं को संतुलित करने का अभ्यास करा सकें।

समाज के उत्थान का दायित्व इसलिए सब तरह से समाज की प्रबुद्ध और कर्मठ मातृशक्ति को ही उठाना पड़ेगा। उन्हीं के हाथों से देश का सर्वांगी चरित्र गढ़ा जा सकता है।

नारी की निंदा

पिछली कई शताब्दियों से वेदों, शास्त्रों, उपनिषदों, पुराणों, स्मृतियों तथा संत कवियों एवं आचार्यों इत्यादि की पुस्तकों में नारी की मिथ्या निंदा होती आई है। अत: यहाँ के लोग नारी को उसी दृष्टि से देखते हैं, उसे लांछित करते हैं तथा उससे वैसा ही व्यवहार करते हैं। आजकल पत्रों-पत्रिकाओं में यह खूब चर्चा हो रही है कि नारी को समाज में पुरुष के बराबर स्थान मिलना चाहिए। नारी से न्याय करने की ओर समाज का जो ध्यान गया है वह तो अच्छा ही है, परन्तु प्रश्न यह है कि पिछले दो-ढ़ाई हज़ार वर्षों से नारी की जो निंदा की गई है, उसका क्या होगा? आज भी पुस्तकालय तो ऐसी पुस्तकों से भरे ही पड़े हैं जिनमें कि नारी के प्रति बहुत ही अनुचित शब्दों का प्रयोग किया गया है। स्कूलों और कालेजों में भी गत काल के कवियों या लेखकों की ऐंसी कृतियाँ तो आज भी पढ़ाई जाती हैं जिनमें कि स्त्री-जाति के प्रति तिरस्कार ही व्यक्त किया गया है। लोग 'प्राचीन संस्कृति' अथवा 'उच्च कोटि का साहित्य' नाम से आज भी ऐसी रचनाएँ तो पढ़ते ही हैं जिनमें कि नारी का बहुत अपमान किया गया है। अत: ऐसे कुत्सित प्रचार की रोकथाम के लिये भी तो कोई उपाय किया जाना चाहिए, वरना एक ओर नारी को समानाधिकार दिलाने की चेष्टा करना और दूसरी ओर नारी को हीन अथवा घटिया दर्जे का जीव मानना तो गोया अपने ही मन्तव्य का विरोध करना है। फिर, नारी की निंदा यदि एक-आध पुस्तक में हो अथवा किन्हीं एक-दो व्यक्तियों ने की हो तो इस बात को छोड़ा भी जा सकता है परन्तु यहाँ तो अनेकानेक ग्रंथ, स्त्री का अपमान करने वाले हैं और वे ग्रंथ भी ऐसे हैं जिनमें लोगों की विशेष आस्था है और उनके रचयिता भी ऐसे हैं जिनकी लोगों में मान्यता है। हम यहाँ ऐसे कुछेक उद्धरण देंगे जिनसे कि यह बात भलीभाँति स्पष्ट हो जायेगी।

संत तुलसीदास क्या कहते हैं?

तुलसीदास जी की निम्नलिखित चौपाई तो प्रसिद्ध ही है –

ढोल गँवार शूद्र पशु नारी,
ये सब ताड़न के अधिकारी।

देखिये तो गोसाई जी ने नारी को पशु की तरह 'ताड़न का अधिकारी' माना

है। यों तो आजकल जो लोग पशुओं को भी ठीक प्रकार से चारा नहीं खिलाते-पिलाते अथवा उन्हें मारते या उनसे अधिक काम लेते हैं, उन्हें भी सरकार दण्डित कराती है और समाज उनकी भी भर्त्सना करता है, यहाँ तक कि आज सरकार की ओर से एक अलग संस्थान है जो कि पशुओं को पीड़ा देने वालों के विरुद्ध कार्यवाही करता है और ऐसे पीड़ित पशुओं की चिकित्सा भी करता है। इसे संक्षेप में 'एस.पी.सी.ए.' (State Prevention of Cruelty of Animals) नाम से लोग जानते हैं। अभी हाल ही में मेनका गांधी की प्रेरणा से घोड़ों को चमड़े के चाबुक से मारने के विरुद्ध एक कानून बना है। परन्तु तुलसीदास जी ने तो नारी को भी पशु की तरह ही पिटाई पाने का अधिकारी बताया है। इधर आज नारी को पुरुष के समान अधिकार देने की चर्चा हो रही है, उधर गोस्वामी जी नारी को पशु के समान (ताड़ना का) अधिकार दिलाना चाहते हैं! तो बताइये, गोस्वामी जी किस प्रकार महिला सशक्तिकरण वर्ष मनाने को कह रहे हैं!!

इतना ही नहीं तुलसीदास जी ने तो कहा है कि नारी के मन में आठ अवगुण सदा ही निवास करते हैं। उनकी यह चौपाई पढ़िये –

नारी सुभाव सत्य कवि कहहीं।
अवगुण आठ सदा उर रहहीं।।
साहस, अनृत, चपलता, माया।
भय, अविवेक, अशौच, अदाया।।

इसमें गोसाई जी ने नारी को सदा झूठा, कपटी, अविवेकी, अपवित्र और निर्दयी, बल्कि साक्षात् 'माया' माना है। इससे ज्यादा नारी की और क्या निंदा की जा सकती है? उन्होंने रामचरित मानस में भरत से स्त्रियों के बारे में ये वचन कहलवाये हैं –

विधिहु न नारि हृदय जानी।
सकल कपट अघ अवगुण खानी।।

अर्थात् नारी में तो इतना छल-कपट भरा हुआ है कि स्वयं सृष्टिकर्ता ब्रह्मा भी नारी के हृदय को नहीं जान सके। इसके अतिरिक्त, नारी को पापिन (अघ) और

''अवगुणों की खान'' भी बताया है। अब आप ही बताइये कि एक ओर तो घर-घर में नारी का इस प्रकार चित्रण किया जा रहा है, हर कथा-कीर्तन के स्थान पर भी पण्डित जी रामायण में ऐसी-ऐसी चौपाइयाँ पढ़ कर नारी को चौपाये जानवरों से भी गया-बीता बता रहे हैं, तब आप दो-चार मास नारी की समानता और सशक्तिकरण का नारा लगा कर क्या कर लेंगे?

फिर, तुलसीदास जी तो इतने से भी बाज़ नहीं आते। उन्होंने तो रामायण में कहीं अनसुइया से और कहीं पार्वती से अर्थात् स्वयं नारी के मुख से भी नारी की निंदा ही करवाई है। उन्होंने एक स्थान पर पार्वती से ये शब्द कहलवाये हैं –

जदपि सहज जड़ नारि अयानी ,
हंसिहहुँ सुनि हमरी जड़ताई।

गोया पार्वती जी कह रहीं हैं कि नारी तो स्वरूप से ही जड़मति है और बे'समझ' (अयानी) है; वह स्वयं को भी जड़ ही मान रही हैं। इसी प्रकार, रामायण के अरण्यकाण्ड में अनसुइया जी, सीता जी से कहती हैं कि – 'सहज अपावन नारी' अर्थात् नारी तो स्वभाव से ही अपवित्र है। इस प्रकार, स्पष्ट है कि पुरुषों ने तो हर प्रकार से नारी को काले रंग से ही पोतने की साज़िश की हुई थी। तुलसी जी की पत्नी ने उन्हें एक बार केवल इतना ही तो कहा था कि – 'हे नाथ, जितनी आपकी मुझ में प्रीति है, यदि उतनी प्रीति राम से होती तो आप भवसागर से तर जाते।' भला इस कथन में कोई झूठ थोड़े ही था; तुलसी जी पर कोई कटाक्ष थोड़े ही था? तुलसी जी अन्धेरी रात्रि में शव पर चढ़ कर नदी पार कर, बिना बुलाये, अपने ससुराल में आधी रात को पत्नी से मिलने गये थे; वासना की प्रबलता को देख कर ही उनकी पत्नी ने तो ऐसी कल्याणकारी बात कही जो तुलसी जी का मन वासना-भोग से व देह-प्रीति से हटा। परन्तु इसकी प्रतिक्रिया के रूप में पत्नी का कोटि-कोटि धन्यवाद करने की बजाय उनका मन तो निराश लौटने के कारण नारी जाति का अपमान करने के पीछे ही लग गया! यहाँ तक कि रामायण में तुलसीदास जी ने एक जगह यहाँ तक भी कह डाला – ''अधम से अधम, अधम अति नारी'' अर्थात् पुरुष कितना भी पापी और नीच क्यों न हो, नारी तो उससे भी अधम है। अब आप सोचिये कि ऐसी चौपाइयों के बारे में कोई ठोस कदम लिये बिना नारी की समानता और सशक्तिकरण का नारा लगाने से क्या लाभ होगा?

कबीर जी क्या कहते हैं?

कबीर जी ने भी नारी की निंदा करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। उन्होंने पुरुष की वासना अथवा 'काम' मनोविकार की बजाय नारी को ही कोसा है। उनके इस दोहे पर विचार कीजिये –

नारी नसावै तीन गुन, जो नर पासे होय।
भक्ति, मुक्ति, निज ध्यान में, पैठि न सक्कै कोय।।

वास्तव में तो 'काम' विकार, चाहे वह स्त्री में हो चाहे पुरुष में, भक्ति और योग (ध्यान) इत्यादि में बाधक है, परन्तु कबीर जी ने दोषी नारी को ही ठहराया है। हालांकि नारी में भी भक्ति-भावना अधिक होती है और पुरुष ही में लज्जा कम होने के कारण वासना व्यक्त होती है, परन्तु नारी के साथ पुरुष (कवि एवं लेखक) अन्याय ही करते आये हैं। अपने मन में विकार का निवास मानने की बजाय उन्होंने नारी को ही 'विकार' अथवा 'कामिनी' कहा है। देखिये न कबीर जी क्या कहते हैं –

नारी तो हम भी करी, जाना नाहिं विचार।
जब जाना तब परिहरी, नारी बड़ा विकार।।

अपने वासना-भोग के लिये विवाह कर लिया और जब जी भर गया तो नारी को 'बड़ा विकार' कह कर उसे छोड़ दिया (– परिहरी)! अपना काम निकाल लिया और फिर नारी को निकाल बाहर किया और सन्त बन गये!! हर हालत में दोषी नारी को ही ठहराया। देखिये न, कबीर जी ने एक अन्य स्थान पर क्या कहा है–

नारी कहौं कि नाहरी, नख सिख से यह खाय।

देखिये, कबीर जी नारी को ऐसा पशु मान रहे हैं जो नाखूनों (नख) से और मुख एवं सिर से गोया अंगों-प्रत्यंगों से मनुष्य को खा डालती है – यह तो जंगली शेर की तरह है। अत: कबीर जी तो नारी को 'नारि' भी नहीं कहना चाहते, वे तो उसे 'नाहरि' कहना अर्थात् 'हरि' से विपरीत ले जाने वाली कहना अधिक पसन्द करते हैं। हालांकि कमज़ोरी पुरुष के अपने ही मन की है परन्तु दुतकारा जा रहा है नारी को, तभी तो उन्होंने कहा है –

एक कनक और कामिनी, विष फल लिया उगाय।
देखत ही ते विष चढ़े, चाखत ही मर जाय।।
छोटी-मोटी कामिनी, सब ही विष की बेल।
बैरी मारै दाव दे, यह मारै हंसि खेल।।

गोया उन्होंने पुरुष को 'कामी' और 'लम्पट' न कह कर नारी को ही 'कामिनी' कहा है, 'विष की बेल'बताया है और मनुष्यत्व को मारने वाली माना है!

पलटू जी क्या कहते हैं?

पलटू साहिब के इन वचनों पर ध्यान दीजिये –

नारी नाहिं निहारिये, करै नैन की चोट,
कोई इक हरिजन ऊबरे, पारब्रह्म की ओट।

पलटू महाराज ने नारी को ऐसा बुरा अथवा दुष्चरित्र मान लिया है कि उसे 'नैनों द्वारा चोट करने वाला' कहा है और उसकी ओर देखने के लिये भी मना कर दिया है। हालांकि कमज़ोरी पुरुष की है परन्तु दोष मढ़ा है नारी के सिर। उन्होंने नारी को 'अफीम की पोटली' भी कहा है –

नारी घोंटी अमल की, अमली सब संसार,
कोई ऐसा सूफी न मिला, जा संग उतरै पार।

पलटू जी ने तो नारी के वचनों को 'छुरी' से और नैनों को शेर के पंजे से उपमा दी है –

खरबूज़ा संसार है, नारी छुरी बैन,
पलटू पंजा सेर का, यों नारी का नैन।

यही परिपाटी भक्ति मार्ग के अन्य कवियों ने भी अपनाई। हरेक से जितना बन सका, उसने नारी की निंदा की।

अब मैं संस्कृत साहित्य के कुछ उद्धरण देकर बताना चाहता हूँ कि प्राचीन

संस्कृति, प्राचीन सभ्यता, राष्ट्र के पूर्वजों की देन (Ancient Heritage) इत्यादि सुन्दर नाम देकर जिसे अपनाया जाता है, उस साहित्य में नारी का कितना निरादर किया गया है –

1. आदि शंकराचार्य जी क्या कहते हैं?

आदि शंकराचार्य जी को लोग 'दिग्विजयी' अथवा 'जगत्-गुरु' की उपाधि से अलंकृत करते हैं। आज भी उन द्वारा स्थापित किये गये चार मुख्य ज्योतिष्पीठों पर शंकराचार्य 'जगद्गुरु' कहलाते हैं। वे शंकराचार्य जी द्वारा कहे अथवा लिखे हुए वाक्यों को अक्षरश: सत्य मानते हैं और सत्य सिद्ध करने की कोशिश करते हैं। अत: आइये किंचित देख तो लें कि 'आदि शंकराचार्य' ने नारी के विषय में क्या कहा है। शंकराचार्य ने 'प्रश्नोत्तरी' नाम से एक छोटी पुस्तिका लिखी है। आज भी वह इसी नाम से छपती-बिकती है। उसमें प्रश्न और उनके उत्तर दिये हैं। उसमें आप देखेंगे कि शंकराचार्य जी ने नारी को 'विश्वास के अयोग्य' बताया है। वे कहते हैं- - 'विश्वासपात्रं न किमस्ति? नारी' – विश्वासपात्र कौन नहीं है – नारी। गोया भाव यह है कि पुरुष तो विश्वासपात्र है परन्तु उसकी तुलना में नारी ऐसी है कि उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार, उन्होंने नारी को 'विष' भी कहा है और पिशाचिनी भी। उनके अपने ही वाक्यों पर ध्यान दीजिये –

(क) किं तद् विषं भाति सुधोपम यत? नारी। अर्थात् वह विष कौन-सा है जो अमृत के समान प्रतीत होता है परन्तु वास्तव में है विष ही? इसका उत्तर देते हुए वे 'नारी' को ही ऐसा 'विष' बतलाते हैं।

(ख) विज्ञान्महाविज्ञतमोस्ति को वा? नार्या पिशाच्या न च वंचितो य:। अर्थात् ज्ञान-विज्ञान में महान कौन है? उत्तर: वह जो नारी रूप पिशाचिनी से ठगा नहीं गया।

इतना ही नहीं, शंकराचार्य जी ने नारी को 'पुरुष के पाँव में सांकल', 'माया का रूप' और न जाने क्या-क्या कहा है। इसी प्रश्नोत्तरी में उन्होंने नारी को 'नरक का द्वार' भी कहा है। तब बाकी कमी क्या रह गई? देखिये –

द्वारं किमेकं नरकस्य? नारी।

अर्थात् नरक का एकमात्र द्वार क्या है? नारी ही। वास्तव में तो वह पुरुष भी

काम का फाटक अथवा सिंहद्वार है जो 'कामी' अथवा भोगी है परन्तु शंकराचार्य जी की न्यायप्रियता तथा तर्क-प्रणाली देखिये कि वे तो नारी को ही 'नरक का द्वार' घोषित कर रहे हैं। क्या इससे और ज्यादा कठोर शब्द हो सकते हैं? नारी की और कड़ी आलोचना हो सकती है? तो जबकि आज भी शंकराचार्य सिंहासनस्थ हैं, उन्हें सारी दुनिया के लोग मिल कर, एक-स्वर होकर, क्यों नहीं कहते कि वे एक घोषणा-पत्र निकालें जिसमें बतायें कि वास्तव में नारी की यह निंदा ठीक नहीं; यह अन्याय पर आधारित है? यदि आज के शंकराचार्य यह स्वीकार करने को तैयार न हों कि नारियाँ भी पुरुष के ही समान हैं, तब तो सरकार को उनके विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही करनी चाहिए अथवा जनता को ही संगठित होकर उन शंकराचार्यों को अस्वीकार (disown) करना चाहिए। वरना, जबकि लोग इन शंकराचार्यों को 'जगद्गुरु' मान बैठे हैं और इनके वचनों को आदर देते हैं तब नारियों को समान अधिकार देने के नारे का कोई ठोस परिणाम तो निकल नहीं सकेगा।

2. वेदों में नारी की निंदा

फिर भारत में बहुत-से धार्मिक सम्प्रदाय वेदों को स्वयं परमात्मा द्वारा दिया ज्ञान मानते हैं। अत: वेदों और ब्राह्मण ग्रंथों को वे अक्षरश: सत्य और अनुकरणीय मानते हैं। परन्तु आप देखेंगे कि स्वयं वेदों, ब्राह्मण ग्रंथों और स्मृतियों में भी नारी को ताड़ने-योग्य माना गया है और उनमें नारी के स्वभाव की निन्दा की गई है। उदाहरण के तौर पर ऋग्वेद संहिता में एक मन्त्र है जिसका अर्थ यह है कि – ''स्त्री के मन पर शासन नहीं किया जा सकता; उसकी बुद्धि और कर्म क्षुद्र अथवा लघु होते हैं।''[1] अब देखिये तो समस्त नारी जाति की बुद्धि को और उनके कर्मों को तुच्छ बता दिया गया है और इस पर ठप्पा लगा दिया है परमात्मा के नाम का। जगह-जगह इसे ईश्वरीय वचन बता कर लोगों को उपदेश दिया जाता है। अत: इसका प्रतिवाद किया जाना, इस मिथ्या एवं ज़हरीले प्रचार को रोकना ज़रूरी है। सभी वेद, नारियों की निंदा करने पर तुले हुए हैं। आपको मालूम रहे कि कृष्ण यजुर्वेद में स्त्री को, पापी एवं कर्म-भ्रष्ट पुरुष से भी अधिक अधम कहा गया है[2]

1. स्त्रिय अशास्यं मन: उतो अह क्रतु रघुम (शा0सं0 8/33/17)
2. यस्मात स्त्रियो निरिन्द्रिया अदायादीरपि पापात् पुंस उपस्तितरं वदन्ति (तै0 सं0 6/5/8/2)

वेदों में स्त्री को विश्वास के अयोग्य[3] और अधीर[4] भी बताया गया है। इस प्रकार नारी को स्वभाव से ही अवगुणों की खान मानते हुए वेदों में भी नारी को पीटने की 'सम्मति' दी गई है! अथर्ववेद में बार-बार ऐसा कहा गया है[5] और तो क्या स्त्री के चरित्र को इतना संदेह-युक्त मान लिया गया है कि वेद कहते हैं कि स्त्री के चरित्र को तो देवता भी नहीं जान सकते तब मनुष्य की तो बात ही क्या है? गोया मनुष्यों का चरित्र तो उज्ज्वल है अथवा जाना जा सकता है परन्तु नारियों के चरित्र पर कोई विश्वास नहीं किया जा सकता! क्या यह समूची नारी जाति के चरित्र पर मिथ्या लांछन नहीं है?

3. उपनिषदों एवं ब्राह्मण ग्रंथों में नारी की निंदा

वेदों के ब्राह्मण भाग में नारी पर मिथ्या दोष लगाये गये हैं। इनमें स्त्रियों को 'स्वभाव से ही झूठा'[6] (अनृत-प्रिय) और 'निरर्थक बातों की और रुझान वाला'[7] बताया गया है और फिर यह आदेश-उपदेश अथवा निर्देश दिया गया है कि यदि स्त्री पति के काम (इच्छा अथवा वासना) को पूरा न करे तो उसे हाथों से या डण्डे-छड़ी से पीटना चाहिए।[8] इसी प्रकार, उपनिषदों में नारी को ऐसा 'विष' बताया गया है कि जिसे देखने से भी मनुष्य को वर्जित किया गया है,[9] उसका चित्र तक देखने की भी मना की गई है।[10] उसके बारे में बात तक करने से भी रोका गया है और कोई व्यक्ति चाहे वृद्ध और विद्वान क्यों न हो, उसे स्त्री पर विश्वास करने के लिये मना किया गया है[11]

---

3. न वै स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति, सालावृकाणां हृदयान्येता (ऋग 10/95/15) माएतद् (स्त्रैणम् आदृथाः, न वै स्त्रैण सख्यमस्ति (11/5/1/9)
4. अधीरा (ऋ 9/56/3)
5. जाया पत्या नुत्तेव (अथर्व 10/1/3) तथा "इन्द्र! जहि पुमांसं यातुधानम, उत स्त्रियं मायया शाशदानाम, (अथर्व वेद – शौ0 सं0 8/4/24)
6. अनृत स्त्री... (शत 14/1/1/31)
7. तस्मादपि एता हि मोधस हिताः
8. बृहदारण्यकोपनिषद् (6 (8)4/7)
9. माद्यति प्रमदां दृष्ट्वा सुरां पीत्वाच माद्यति।
   तस्माद् दृष्टिविषां नारीं दूरतः परिवर्जयेत। (नारद-परिव्राजकोपनिषद्)
10. न सम्भावयेत स्त्रियं काञ्चित पूर्वदृष्टां न च स्मरेत।
    कथां च वर्जयेत् तासां न पश्येत् लिखितामपि (नारद परिव्राजकोपनिषद्)
11. सुजीर्णोप सुजीर्णासु विद्वान स्त्रीषु न विश्वसेतु (संन्यासोपनिषद्)

अर्थात् स्त्री के चरित्र को इतना पतित माना गया है।

4. मनुस्मृति में स्त्री की निंदा

भारत के बहुत-से मत, सम्प्रदाय अथवा संस्थान मनुस्मृति को भी मनुष्य एवं समाज के लिये, सृष्टि के आरम्भ में, परमात्मा द्वारा दिया हुआ मानते हैं। वे मनु के वचनों को समादर की दृष्टि से पढ़ते हैं और उन्हें व्यवहार में लाना उत्तम मानते हैं। परन्तु आज यह बात तो लोक-प्रसिद्ध हो चुकी है कि मनु जी ने तो नारी की बहुत कड़ी आलोचना की है। यदि मनुस्मृति में से नारी की निंदा-सम्बन्धी वचनों को उद्धृत करने लगें तब तो बहुत पन्नों की आवश्यकता होगी। अत: यहाँ नमूने के तौर पर एक-दो वाक्यों का ही उल्लेख करते हैं। इसी से विज्ञपाठक जान जायेंगे कि मनु ने भी नारी के चरित्र को अविश्वस्नीय और दोषयुक्त घोषित किया है और इसलिये नारी को पीटने का भी उपदेश किया है। मनु जी ने कहा है कि नारी का तो स्वभाव ही ऐसा है कि वह नर को भी दूषित अर्थात् पतित बना देती है।[12] वे कहते हैं कि नारी अस्थिर-बुद्धि है; इसलिये वह विश्वास के योग्य नहीं है[13]। अत: मनु जी ने नारी (भार्या) को पीटने के लिये कहा है[14]। ऐसे ही 'शंख स्मृति' में भी स्त्री को समय पर पीटने के लिये भी कहा गया है।[15]

5. 'चाणक्य नीति', 'कौटल्य अर्थशास्त्र' तथा 'शुक्र नीति', 'हितोपदेश' इत्यादि में नारी की घोर निंदा

भारतवासी चाणक्य नीति को भी संसार के नीति-ग्रंथों में बहुत उच्च स्थान देते हैं। उन्हें इस बात का बहुत गर्व है कि हमारे देश के पास भी एक ऐसा व्यवहार शास्त्र अथवा नीति-ग्रंथ है। परन्तु आप देखेंगे कि वेदों, उपनिषदों, मनुस्मृति इत्यादि की तरह यह ग्रंथ भी नारी की निंदा करने में किसी से पीछे नहीं है। अत: आप विचार कीजिये कि जबकि नीति ग्रंथ भी मनुष्य को स्त्री के प्रति ऐसा निकृष्ट दृष्टिकोण अपनाने और अपमानकारी व्यवहार अपनाने को कह रहे हैं तो फिर एक वर्ष के लिये महिला

12. स्वभाव एष नारीणां नराणामिह दूषणम् (मनु0 2/213)
13. स्त्रीबुद्धेरस्थिरत्वावत (मनु 8/77)
14. भार्या, पुत्रश्य, दासश्च, प्रेष्यो, भ्राता च सोदरा। प्राप्तापराधास्ताड्या: स्यूरज्वा वेणुदलेन वा' (मनु0 8/299)
15. ताड़नीया तथेव च... (शंख स्मृति 4/16)

सशक्तिकरण वर्ष मना डालने से विशेष क्या अन्तर पड़ जायेगा? देखिये न चाणक्य सूत्रों में स्पष्ट कहा है कि स्त्री सर्व अशुभों का मूल है,[16] उसका मन अस्थिर और तुच्छ है,[17] स्त्रियों का मन स्थिर हो ही नहीं सकता, न वे समाधि लगा सकती हैं,[18] इसलिये स्त्रियों का कभी विश्वास नहीं करना चाहिए।[19] इसी नीति ग्रंथ में स्त्री को 'बिना लोहे की बेड़ी' माना है[20] और यह भी कहा है कि यह संसार सागर में स्नान करने में मनुष्य के गले में पहनी हुई बड़ी भारी शिला है।[21] तुलसीकृत रामायण में जैसे स्त्री में आठ दोष गिनाए हैं वैसे ही इसमें भी स्त्री को झूठा, स्वभाव से ही मूर्ख, अति लोभी, गुणहीन, अपवित्र आदि माना गया है।[22] यही बात 'हितोपदेश'[23] में तथा 'पंचतंत्र'[24] में भी कही गई है। 'कौटल्य अर्थशास्त्र' ने भी स्त्री-वैर प्रगट करने में कोई कमी नहीं छोड़ी। उसमें कहा गया है कि यदि स्त्री कहा न माने तो पहले उसे इस प्रकार की गाली देकर सीधा करो – "नग्ने! विनग्ने! न्यङ्गे! अपितृके! अमातृके! उसे खूब आक्रोश से झाड़ो, डांटो। यदि तब वह सीधी न हो तब हाथ से या बेंत से उसकी ताड़ना करो।"[25] अन्य प्रसिद्ध ग्रंथ 'शुक्रनीति' में भी ऐसा ही कहा गया है कि स्त्री में झूठ और काम अधिक होता है और कि शूद्र और नारी को रस्सी इत्यादि से पीटो।[26] 'हितोपदेश' में भी उपदेश दिया गया है कि स्त्री की ताड़ना होने से, उसे वश में रखने से ही वह अविकारिणी रहती है वरना नहीं।[27] तो देखिये, इस प्रकार सभी ग्रंथ पुरुष को यह मति

16. स्त्री नाम सर्वाशुभानां क्षेत्रम् (चाणक्य सूत्र 476)
17. स्त्रीणां मनः क्षणिकम् (चा0 478)
18. न समाधि स्त्रीषु लोकज्ञता च (चा0 360)
19. स्त्रीषु किंचिदपि न विश्वसेत (चा0 359)
20. अलोहमयं निगलं कलत्रम (चा0 355)
21. एषा कण्ठ तटे कृता खलु शिला संसारवारां निधौ।
22. चाणक्य नीति (2/1)
23. हितोपदेश (1/195) { अनृतं, साहसं, माया, मूर्खत्वम्, अतिलोभिता। / निर्गुणत्वम्, अशौचं च स्त्रीणां दोषाः स्वभावजा। }
24. पंचतंत्र – मित्रभेद
25. वेणुदल-रज्जु-हस्तानामन्यतमने वा पृष्ठे त्रिराघातः (कौटल्य अर्थशास्त्र 3/3/60)
26. अनृतं, साहसं, मौर्ख्यं, कामाधिक्यं, स्त्रियां यत (शुक्र-नीति 3/164)
    भार्या, पुत्रश्च, भगिनी, शिष्यो, दासः (या शूद्रः), स्नुषानुजः कृतापराधाः ताड्यास्ते तनुरज्जु सुवेणुभिः (शुक्रनीतिः 4/85)
27. सुशासिता स्त्री, नृपतिः सुसेवितः।.सुदीर्घकालोपि न यान्ति विक्रियाम (मित्रलाभ; पद 22)

दे रहे हैं कि वह स्त्री के चरित्र पर विश्वास न करे और वे उसे भड़का भी रहे हैं कि वह जैसे-कैसे उसे मारता-पीटता रहे। ऐसी स्थिति में तो इस विषैले प्रचार की रोक-थाम के लिए कोई ठोस कार्यवाही करनी ही होगी। कोई एक-आध ग्रंथ ऐसा मिथ्या आलाप कर रहा हो तो बात भी है, यहाँ तो सभी इसी उत्तेजनाकारी एवं निंदाकारी कर्म में लगे हैं। देखिये न बाल्मीकि रामायण, महाभारत, देवी भागवत्, श्रीमद्भागवत् इत्यादि ग्रंथ क्या कहते हैं! एक-एक नमूना उनमें से भी देख लीजिये:-

बाल्मीकि रामायण, महाभारत तथा पुराणों में नारी की निंदा

बाल्मीकि रामायण में भी कहा है कि स्त्रियाँ स्वभाव से ही दुष्टा होती हैं।[28] वे चंचला और तीक्ष्ण स्वभाव वाली होती हैं।[29] सोचने की बात है कि क्या केवल स्त्रियों का ही स्वभाव ऐसा होता है,पुरुषों का नहीं? महाभारत में भी इसी प्रकार के दोष स्त्री - चरित्र पर लगाये हैं। लिखा है कि – ''नारियाँ असत्य बोलती हैं,[30] वे तंगदिल होती हैं और दोषों का मूल होती हैं।[31] गोया इसका भाव यह कि पुरुष सत्यवादी, बड़े उदारचित्त और पवित्र होते हैं!! श्रीमद्भागवत् में भी कहा है कि स्त्रियों की मित्रता पर विश्वास नहीं करना चाहिये।[32] भविष्य पुराण में तो बहुत ही अंट-शंट कहा है। उसमें लिखा है कि स्त्रियों पर न विश्वास करो, न इन्हें स्वतंत्रता दो।[33] इनकी भर्त्सना करो[34] और इन पर शासन करने के लिये इनकी ताड़ना करो।[35] देवी भागवत् में भी नारी में झूठ, मूर्खता इत्यादि आठ दोष बताये गये हैं।[36] और तो और, सत्यार्थ प्रकाश में दयानन्द जी ने भी कहा है कि नारी में 'काम' अधिक होता है।[37]

---

28. स्त्रीत्वाद् दुष्ट स्वभावेन (वा0रा0 3/45/33)
29. ...विमुक्तधर्माश्चपलास्तीक्ष्णा भेदकरा: स्त्रिय: (बा0रा0 3/45/29-30)
30. असत्यवचना नार्य: (महाभारत 1/74/75)
31. स्त्रियोहि मूलं दोषाणां लघुचित्ता हि ता: स्मृति: (महाभारत, अनुशासन पर्व 38/1)
32. क्वापि सख्यं न वै स्त्रीणां वृकाणां हृदयं यथा श्रीमद्भगवत् (9/14/36-37)
33. और 34. नह्यासां प्रमदं दद्याद्, न स्वातन्त्र्यं, न विश्वसेत...(भवि0 पु0 8/17)
35. तस्माद यथोदितास्त्वेता रक्ष्या: शासनताडनै:।
ताड़नैश्च यथा कालं यथावत् समाचरेत 8/26
36. देवी भागवत् 1/5/83
37. सत्यार्थ प्रकाश (11 सम्मु0, पृष्ठ 236)

इस प्रकार आपने देखा कि समस्त हिन्दू शास्त्र एक स्वर से नारी की निंदा कर रहे हैं। ईसाइयों के धर्म-ग्रंथ बाइबिल की पुरानी किताब में भी स्त्री के बारे में जो-कुछ लिखा है, वह भी निंदापरक ही है।

ईसाइयों के धर्म-ग्रन्थ बाइबिल में

बाइबिल में यह जो किस्सा आया है कि शैतान ने स्वर्ग के बग़ीचे में पहले स्त्री (Eve) को बहकाया, वर्गलाया, अपने साथ मिलाया और वर्जित फल खाने के लिये फ़ुसलाया और पुरुष (Adam) बाद में नारी (Eve) के कहने पर लग कर ईश्वराज्ञा तोड़ बैठा – यह भी एक प्रकार से नारी को मायावी, दुष्टा, अवगुण खान, पतिता इत्यादि कहने का सूक्ष्म प्रयत्न है। यह स्त्री के चरित्र को दुर्बल बताने का अपरोक्ष तरीका है।

करोड़ों लोग जो इन धर्म-ग्रंथों को मानते हैं, इन्हें पढ़ते अथवा सुनते हैं, वे स्त्री-निन्दक वाक्यों से न्यूनाधिक प्रभावित होते हैं, तभी तो पुरुष, स्त्री की ताड़ना करना अपना अधिकार समझते हैं। हम भारत में हर आये दिन देखते हैं कि गली-मोहल्ले में पति लोग स्त्री के चरित्र पर विश्वास न करके, उन (पत्नियों) के किसी बात को न मानने पर उन्हें खूब पीटते हैं, उन्हें भद्दी-भद्दी गाली देते हैं, उन्हें 'नग्ने!' इत्यादि कहने से भी आगे बढ़ कर, वे उनके वस्त्र उतार भी लेते हैं और उन्हें घर से बाहर निकाल देते हैं!! वस्तुत: जन्म-जन्मान्तर से पण्डितों-पुजारियों द्वारा शास्त्रों-ग्रन्थों के उपरोक्त वचनों को सुनने के परिणामस्वरूप उन्हें नारी का यह अनादर एवं तिरस्कार करने और उन्हें पशु की तरह पीटने का दुस्साहस होता है। अत: यह अत्यन्त आवश्यक है कि शास्त्रों में भरे इस कचड़े का कुछ उपाय किया जाय! क्या इस महिला सशक्तिकरण वर्ष में भी हम माताओं-बहनों-कन्याओं पर निर्दयता से होते यष्टि, बैंत, हस्त प्रहार को रोकने के बारे में कोई क़दम नहीं उठायेंगे? क्या शताब्दियों से होते आये इस अत्याचार, अनाचार और अन्याय को अब भी हम रोकने का पूरा यत्न नहीं करेंगे? क्या निर्दोष नारियों की करुण पुकार से हमारा हृदय अब भी प्लावित नहीं होता? आजकल संसद में महिलाओं पर होने वाली घरेलू हिंसा को रोकने के सम्बन्ध में एक विधेयक पास करने पर विचार-विमर्श चल रहा है। यह क़ानून पास हो जाये तो अच्छा है, कम-से-कम सरकार का ध्यान इस ओर गया तो है। लेकिन आजकल सरकारी काम-काज पर भी "नौ दिन चले अढ़ाई कोस" वाली कहावत लागू होती है। महिलाओं के लिए 33%

आरक्षण वाला विधेयक भी तो कई वर्षों से चर्चा में है पर पास होते-होते फिर रह जाता है क्योंकि संसद में भी बहुमत तो पुरुषों का ही है और महिलाओं को आगे करने के नाम पर उनके भी हृदय विदीर्ण तो होते ही हैं, नहीं तो जिस वायदे को घोषणा-पत्र में करके, सरकार सत्ता में आई है, उसे पूरा करना उसका नैतिक कर्त्तव्य है।

इसके लिए उपाय

इसके लिये हमारा एक तो यह सुझाव है कि जिस किसी भी ग्रन्थ, शास्त्र इत्यादि में जहाँ-कहीं भी इस प्रकार की निन्दा की गई है, वहाँ उस पृष्ठ पर फुट नोट (Foot note) होना चाहिए कि "स्त्री-निंदा के ये वाक्य मिथ्या हैं, अमान्य हैं, अवैधानिक (unconstitutional) हैं और अन्याय पर आधारित हैं।" यदि हम पूर्व-रचित ग्रन्थों में से नारी-निंदा सम्बन्धी वाक्यों को निकाल (expunge) नहीं भी सकते तो कम-से-कम उनका प्रतिकार या प्रतिरोध तो व्यक्त होना ही चाहिए ताकि नई पीढ़ी, आज की सामाजिक मान्यता को तो जान सके। जैसे विदेशों में और भारत में भी कानून के कारण सिग्रेट के हर पैकिट पर यह छपा होना ज़रूरी है कि धूम्रपान स्वास्थ्य के लिए हानिकर (Smoking is injurious to health) है, वैसे ही समाज के स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाले ऐसे वाक्यों के बारे में ऐसा फुट-नोट भी कानूनी तौर पर अनिवार्य बना दिया जाय और इसको न छापने वाले लेखक, सम्पादक या प्रकाशक दण्डनीय घोषित हों ताकि समाज में एक ऐसा विचार फैले कि नारी को पीटना, उसकी निंदा करना, उसे स्वभाव से ही झूठा इत्यादि बताना बकवाद करना ही नहीं बल्कि अपराध करना है। ऐसा ही कानून उन पर लागू होना चाहिए जो इन वाक्यों को उचित सिद्ध करने का प्रचार करते हैं।

इसके अतिरिक्त, जैसे पशुओं से अधिक भार को ढोने अथवा उनसे अन्याय-युक्त, निर्दयता-युक्त व्यवहार करने एवं पीड़ा देने वाले को दण्डित किया जाता है, वैसे ही पत्नी पर चोट करने या उसे मारने-पीटने वाले को भी कानून अपराधी मान कर दण्डित करे। आज आस्ट्रेलिया जैसे विकसित कहे जाने वाले देश में भी नारियों के आन्दोलन हो रहे हैं कि पुरुष उन्हें पीटते हैं; भारत की नारी तो बेचारी शताब्दियों से पुरुषों के आतंक को सहन करती चली आ रही है। कम-से-कम अब

तो इस विषय में कोई कड़ा कानून बनना ही चाहिए जिससे कि आगे के लिये उन्हें राहत मिले। संसार में एक बहुत बड़ी जनसंख्या पर अत्याचार हो रहा है। एमनेस्टी इण्टरनेशनल (Amnesty International) को भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसके बारे में कानून बनवाना चाहिए और जहाँ नारियाँ गुलामी का-सा जीवन जीने के कारण आवाज़ नहीं उठा पातीं, वहाँ उन पर होने वाले अत्याचारों के विरुद्ध कार्यवाही इन संस्थाओं को अपने हाथ में लेनी चाहिए। जैसे सरकार ने हरिजनों को मन्दिरों में प्रवेश देने सम्बन्धी कानून बनाये, वैसे ही सरकार नारी वर्ग की आवाज़ सुनते हुए इस ओर भी कदम उठाये, ऐसा हमारा निवेदन है।

प्राचीन काल के ग्रन्थों द्वारा संचालित रीति-रिवाजों तथा मान्यताओं के परिणामस्वरूप नारी का शोषण

आज समाज का प्रमुख्य नारा यह है कि सभी को स्वतन्त्रता एवं समान अधिकार मिलें तथा निर्धनों और निर्बलों का शोषण (Exploitation) बन्द हो। परन्तु हम देखते हैं कि व्यवहारिक रूप में समाज के लगभग 50% भाग का शोषण हो रहा है, उन्हें उनके अधिकारों से वंचित रखा गया है, उन्हें स्वतन्त्रता नहीं मिली। यों तो आज 'नारी स्वतन्त्रता' का प्रश्न विश्व-भर में चर्चा का विषय बना हुआ है, परन्तु भारत में तो 'नारी शोषण' समस्या और भी अधिक दुरूह है। देखा जाय तो इस समस्या का मूल यहाँ के पुराने ज़माने के शास्त्र और उन द्वारा संचालित रीति-रिवाज तथा मान्यताएँ हैं। यदि हम निष्पक्ष भाव से तथा न्याय की दृष्टि से देखें तो प्राचीन ग्रंथों में कन्या अथवा स्त्री के बारे में पुरुष के मन में ऐसे भाव बिठा दिये गये हैं जिससे कि पुरुष उन्हें हीन मानता है। इसलिए वह उनसे व्यवहार भी वैसा ही करता है। हम यहाँ कन्या अथवा नारी के बारे में शास्त्रों द्वारा प्रचारित शोषणात्मक दृष्टि के कुछेक उदाहरण देंगे।

धर्म-ग्रन्थों में पुत्री का जन्म अवांछनीय

धर्म-शास्त्रों में पुत्र का होना पितरों का उद्धार करने के लिए ज़रूरी माना गया है[1] इसलिए पुत्र जन्म की बहुत प्रशंसा की गई है[2] और पुत्र को परम सुख का साधन[3] बताया गया है। ऋग्वेद में पुत्र के जन्म के लिये बार-बार प्रार्थना है परन्तु पुत्री जन्म के लिए एक भी नहीं[4]। ब्राह्मण ग्रंथों में तो पुत्र को 'परलोक की ज्योति' भी कहा है[5] परन्तु उन्हीं में कन्या को 'कष्ट' माना गया है। धर्म-शास्त्रों के अनुसार पुत्री का जन्म

1. पुत्रान् इच्छेत पावनार्थं पितृणाम (महा0 आदि एर्व 98, 47 तथा 99.19 तथा उद्योग पर्व 116.8)
2. महाभारत, शान्तिपर्व 7.13 तथा 169.6 तथा उद्योग पर्व 33.79।
3. महा0 आदि पर्व 68, 57-57 तथा पुत्र लाभे हि कौन्तेय सर्व लाभाद् विशिष्यते (महा0 आदि पर्व 98.47)
4. ऋग्वेद 1.91.20 तथा भगवती शरण उपाध्याय : 'विमेन इन ऋग्वेद', पृष्ठ 33
5. और 6. अथर्ववेद 6, 11/3.23

अवांछनीय है।' 'प्राचीन भारत में नारियों का स्थान' के लेखक आलतेकर जी ने भी यही कहा है कि चूँकि कन्या को अपने घर को छोड़ दूसरे घर चला जाना होता था, इसलिए पुत्री ऐसे उपयुक्त नहीं मानी जाती थी जैसे पुत्र।[8]

धर्म-शास्त्रों में नारी स्वतन्त्रता के अयोग्य

न केवल कन्याओं के प्रति ऐसा असमानता का दृष्टिकोण था बल्कि कन्या हो या स्त्री, उसे स्वतन्त्रता के योग्य नहीं माना जाता था। यहाँ तक कि उसे गृह-कार्यों में भी स्वतन्त्रता देना वर्जित था। मनु ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि कुमारी अवस्था में पिता उसकी रक्षा करे, युवा होने पर पति और विधवा होने पर पुत्र, परन्तु नारी को स्वतन्त्रता कभी भी न दी जाय।[9] वह सदा किसी-न-किसी के अधीन अथवा वश होकर ही रहे।[10] स्त्री को खर्च करने में भी कभी खुले हाथ नहीं रहने देना चाहिए।[12] पुनश्च, उसके पिता ने जिस पुरुष को उसे दान (कन्या दान) में दिया है, स्त्री आयु पर्यन्त उसकी एक भी आज्ञा न टाले।[13] अब आप ही देख लीजिये कि स्त्री का समाज में क्या स्थान था। गोया उसका अपना कोई निजी जीवन ही न था, कोई इच्छा और स्वतन्त्र लक्ष्य ही न था! वह एक प्रकार से पुरुष के चरणों की दासी ही थी।

नारी पुरुष के लिए सामान की एक चीज़

इतना ही नहीं, शास्त्रों में नारी की गणना घर के सामान में की गई है! उसे तो धान्य, पशु, स्वर्ण तथा अन्य भोग्य सामग्री में ही गिना गया है।[14] पुरुष के लिए जो-जो चीज़ें चाहिएँ, उन चीज़ों (Goods and Chattles) में उसे

7. मनुस्मृति 3. 57-58
8. आलतेकर: 'पोजीशन आफ विमेन' में पृष्ठ 3।
   स्वातन्त्रेण कर्तव्या किंचित्कार्य गृहेष्वपि – (मनु 5.1)
   स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति (मनु 9.3)
9. बाला वा युवत्या वा वृद्धया वाएपि योषिता न
10. पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने रक्षन्ति
11. बाल्ये पितुर्वशे...न भजेत्स्त्री स्वातन्त्रताम (मनु 5.2)
12. सुसंकृतोपस्करया व्यये चामुक्तहस्तया (मनु 5.4)
13. ....तंशुश्रषेत जीवन्तं संस्थितं च न लङ्घयेत (मनु 5.5)
14. महाभारत – अनुशासन पर्व 141.31 तथा उद्योग पर्व 39.61

सम्मिलित किया गया है अथवा पुरुष के लिए उसे एक वांछित धन मात्र ही माना गया है।[5] अन्य सामग्रियों की भाँति कन्याओं को भी युद्ध में विजय के फलस्वरूप प्राप्य माना गया है।[6] जब नारी को ऐसा ही मान लिया तो किंचित विचार कीजिये कि समाज में उसकी क्या स्थिति रही?

नारी को वेद-अध्ययन वर्जित

फिर, हम देखते हैं कि यद्यपि प्राचीन काल में कुछेक विदुषी नारियाँ थीं और गिनी-चुनी नारियों के नाम का ही आज तक ढ़ोल पीटा जाता है परन्तु प्राय: कन्याओं की शिक्षा पर बल नहीं दिया जाता था, उनके लिए व्यवस्था ही नहीं थी और नारियों के लिए वेदों इत्यादि का अध्ययन भी वर्जित था क्योंकि पुरुष वर्ग ऐसा मानता था कि नारी शारीरिक कारणों से अपवित्र होती है और असत्य की मूर्ति होती है। अत: मनु ने भी स्त्री के लिए वेद-अध्ययन वर्जित किया है[17] तथा महाभारत इत्यादि ग्रन्थों में भी ऐसा उल्लेख है।[8] कहा गया है कि स्त्रियों को वाणी, बंध या क्लेश के भय से भी वश करना असम्भव है। यह कितना अन्याय है कि उन्हें अपने वश में रखने के लिए, उनसे अपनी आज्ञाएँ पालन कराने के लिए तथा सारी आयु दासी की न्यायीं उनसे सेवा लेने के लिए जैसे साम्राज्यवादी (Imperialist) जातियाँ – अंग्रेज़ इत्यादि – अपने अधीन देशों के लोगों को विद्याध्ययन से भी वंचित कर रखते थे, वैसे हज़ारों वर्षों से पुरुष ने स्त्री का शोषण करने के लिए किया है!

धर्म-शास्त्रों के अनुसार शील-रहित पति भी देवता है

शास्त्रों ने नारी को इतने से ही नहीं छोड़ दिया बल्कि उसे आदेश दिया है कि चाहे पति शील-रहित हो, कामपूर्ण हो या गुणगण से परिवर्जित हो, कैसा भी क्यों न हो, स्त्री के द्वारा उसकी सेवा सदा देवता तुल्य होनी चाहिए![19] बल्कि इससे भी आगे

15. महाभारत, आदि 79.17; सभा पर्व 45.10; शान्ति 7.23/106, 11; अनुशासन 9.47/240.14
16. महाभारत – शान्ति 97.5; आरण्यक 79.26
17. जदपि जोशिता अनाधिकारी मनु 9.13.
18. महाभारत – अनुशासन पर्व 75. 8.15
19. विशैल: कामवृत्तो वा गुणर्वा परिवर्जित:। उपचर्य: स्त्रिया साध्व्या सततं देववत् पति:॥ (मनु 5.8)

यह कहा है कि स्त्रियों के लिए पति-सेवा के अतिरिक्त न तो कोई यज्ञ ही होता है न कोई व्रत तथा उपवास ही होता है।[20] पति की सेवा ही एक ऐसी है कि वह उसी से स्वर्ग प्राप्त करके प्रतिष्ठित हो जाती है। स्त्री पाणिग्रहण करने वाले स्वामी की पूर्ण सेवा करे और जब वह मृत्युगत होवे तो भी पतिलोक की ही कामना करे; वह कभी भी ऐसा कार्य न करे जो पति को अप्रिय हो।[21] स्पष्ट है कि इस प्रकार का उपदेश करना तो गोया स्त्री को पूरी तरह काबू करना है। जब यहाँ तक कह दिया कि 'पति शील-रहित ही क्यों न हो, उसे भी देवता मानो', तो बाकी क्या रहा!

सती प्रथा शास्त्र-सम्मत

इसके साथ ही यह जो कह दिया है कि 'पति मृत्युगत हो जाय तो पत्नी पति लोक की कामना करे' – इसका अर्थ तो यही है कि वह 'सती' हो जावे। शास्त्रों में स्पष्ट कहा है कि ''जो नारी अपने मृतक पति के शव के साथ स्वयं को भस्म कर देती है वह स्वर्ग में इतने हज़ार वर्ष रहती है जितने कि मनुष्य के शरीर पर बाल होते हैं।'' ऐसे मिथ्या प्रलोभन देकर नारी को मरने के लिए उकसाया गया है! अब देखने की बात यह है कि स्त्री के लिए तो यह कहा गया है कि वह स्वयं को पति की मृतक देह के साथ स्वाहा कर दे परन्तु पुरुष के लिए तो ऐसा कोई भी विधान नहीं।

गोया पति तो हर हालत में स्वर्ग में जायेगा और देखिये, जब पति जीवित हो तो उसकी दीर्घ आयु इत्यादि के लिए कई व्रत रखने के लिए भी स्त्री ही को उपदेश-आदेश दिये गये हैं परन्तु पुरुष के लिये ऐसा कोई भी उपदेश नहीं है कि वह भी स्त्री की कुशलता के लिए कोई उपवास, कोई व्रत करे!

विधवा की हालत

फिर, पति की मृत्यु होने पर यदि नारी सती नहीं होती तो वह बेचारी (विधवा) ऐसे कपड़े पहनती है और इस प्रकार रहती है कि देखने वालों को दूर से ही स्पष्ट

20. नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतं नाप्युपोवितम्। पति शुश्रुते येन तेन स्वर्गे महोपते ॥ (मनुः 5.10)
21. पाणिग्रहस्य साध्वी स्त्री जीवतो वा मृतस्य वा।
पति लोकम् अभीप्सन्ती नाचरेत्किंचित् अप्रियम् ॥ (मनु 5.11)

विदित हो कि यह विधवा है। समाज उसे अमंगल का चिह्न समझता है। उसे भाग्यहीन तो माना जाता है ही। शारीरक रीति से सती न होने पर, मानसिक रूप से अब उसे जीवन-भर ही सती होना पड़ता है अर्थात् चिन्ता एवं अपमान की अग्नि में जलना पड़ता है।

कन्या-पक्ष के लोगों की हालत

इसके अतिरिक्त, कन्या का जब विवाह हो तो उसके माता-पिता को विधि अथवा प्रथा के अनुसार वर पक्ष वालों को उपहार देने होते हैं, दहेज के रूप में भी कुछ-न-कुछ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से देना होता है। अभी भी आये दिन इस प्रकार के समाचार छपते रहते हैं कि दहेज की बात को सुन कर अमुक कन्या ने अपनी हत्या कर डाली। पिछले दिनों तो समाचार पत्रों में यह भी छपा था कि एक कन्या के पिता ने वर पक्ष वालों को हर प्रकार से समझाने की कोशिश की कि वे दहेज के लिए जितनी माँग कर रहे हैं, उतनी वह पूरी करने में सर्वथा असमर्थ हैं परन्तु वर वालों ने वह मांग पूरी न होने पर शादी से ही इंकार कर दिया। आखिर इस प्रकार के आतंक से तंग आ कर कन्या के पिता ने अपनी पुत्री का सिर काट दिया और वह उसे ले गया वर को देने।[22] बताइये तो, कन्या की अथवा नारी की समाज में कैसी स्थिति है! पशु को बेचने से भी, बेचने वाले को कुछ तो मिलता है, परन्तु पालन-पोषण करके अथवा पढ़ा-लिखा कर कन्या देने वाले को कई हज़ार रुपयों की सम्पत्ति भी साथ में देनी पड़ती है। कन्या को जीवन-पर्यन्त दासी बन कर हर आज्ञा का पालन भी अवश्य करना पड़ता है, इससे ज्यादा और क्या अन्याय हो सकता है?

जीवन-भर वर को उपहार

कन्या पक्ष वालों को न केवल कन्या और दहेज ही सौंप देना पड़ता है बल्कि प्रथा यह है कि उन्हें जीवन-पर्यन्त विशेष त्योहारों, उत्सवों, अवसरों इत्यादि पर वर को या उसके माता-पिता इत्यादि को कुछ-न-कुछ भेंट, उपहार इत्यादि देने

22. दैनिक नवभारत टाइम्स् । जून 1976

होते हैं। इस पर भी यदि कन्या के माता-पिता या और कोई सम्बन्धी कन्या के ससुराल में या उसके घर चले जायें, तो प्रथा यह है कि वे एक चाय का प्याला भी उसके यहाँ नहीं ले सकते! गोया कन्या और कन्या-पक्ष के अन्य लोगों की स्थिति निम्न-स्तर की ही मानी जाती है, मानो कि उन्होंने कन्या को जन्म देकर कोई पाप किया है! उपरोक्त से स्वत: सिद्ध है कि समाज में कन्या और उसके माता-पिता का स्थान निम्न माना जाता रहा है तथा नारी का हर प्रकार से शोषण ही होता चला आया है।

नारी पर मिथ्या आरोप

ऐसा व्यवहार करने के बाद भी समाज सन्तुष्ट नहीं होता। इतने दु:खदायक विधानों एवं प्रथाओं के बाद भी नारी जाति की घोर निन्दा शास्त्रों में की गई है। नारी के साथ वैसा व्यवहार किया गया है जैसे आज गोरी जाति के लोग (white races) काले वर्ण के लोगों (Negroes) के साथ किन्हीं देशों में करते हैं। उससे भी आगे बढ़ कर शास्त्रकारों ने, ज़हर में लेखनी डुबो कर, नारी की इतनी निन्दा की है जितनी वे कर सकते थे। उदाहरण के तौर पर महाभारत में लिखा है कि ".....'काम' स्त्रियों के लिए परम फल होता है। सहस्त्रों नारियों में कहीं एक पतिव्रता नारी होती है। अन्यथा, स्त्रियाँ रतिशील (काम-लोलुप) होती हैं और अपने पिता, भाई, पति या पुत्र का भी विचार नहीं करतीं....।[23]" इसी प्रकार नारद के पूछने पर पंचचूढ़ा ने स्त्री-स्वभाव की कटु निंदा करते हुए कहा है – "स्त्रियों से बढ़ कर पापी नहीं हो सकता; वे सारे दोषों का मूल हैं। स्त्रियों में स्वयं मर्यादा का कोई ध्यान नहीं रहता। कुलीन और नाथवती स्त्रियाँ भी मर्यादा में नहीं रखी जा सकतीं; वे घृणित पुरुषों पर भी आसक्त होती हैं।...चंचल और दुर्बोध स्वभाव वाली नारी एक ओर और अन्तक, बड़वानल, मृत्यु, विष, सर्प, अग्नि, छुरे की धार – ये सभी विनाश-हेतु एक ओर, दोनों बराबर हैं।[24]" और चंचल तो सभी नारियों को माना ही गया है।[25]

23. अनुशासन पर्व 50.90 98-101 ये शब्द उत्तरादिक ने अष्टावक्र से नारी जाति के बारे में कहे हैं।
24. महा0 अनुशासन0 73. 11-31
25. महा0 अनु0 75.8

यह कैसा अनर्थ है कि नारी को सर्प और छुरे की धार से अधिक घातक माना गया है और पुरुष स्वयं तो दूध का धुला हुआ, साक्षात् धर्मराज का अवतार, पवित्र है ही! उसी के हाथ में लेखनी है, उसी के हाथ में धर्म-सत्ता है, उसी को ही बाहु-बल प्राप्त है, पीटने का अधिकार उसके पास है, राजा, मन्त्री, कोतवाल भी सभी उसी के वर्ग के हैं, वह नारी का 'नाथ' और 'स्वामी' भी है ही, उसकी इच्छा के विरुद्ध तो नारी को कुछ कहना तथा करना वर्जित है, अत: वह जो चाहे नारी के बारे में लिख डाले। नारी के बारे में तो उसने यह भी लिख दिया है कि नूतन सृष्टि करते समय स्वयं ब्रह्मा जी ने नारी को काम-भाव और क्रोध के साथ, दुर्वचन और अनारीपन प्रदान किये ताकि वह पुरुषों को मोह में डाल दे[26] (मानो स्वयं ब्रह्मा जी ने उसे ऐसा बनाया हो)। कहने का भाव यही तो हुआ न कि यूँ पुरुष स्वयं तो निर्दोष, निर्विकार, माया-मोह रहित, साक्षात् देवता ही है परन्तु सृष्टिकर्त्ता ने नारी में काम-क्रोध, मूर्खता तथा चंचलता स्वभाव में ही भर दिये हैं! गोया नारी जाति होती ही ऐसी है। महाभारत में भीष्म कहते हैं कि – "मनुष्य की सहस्र जिह्वाएं हों, उसे शत वर्ष की आयु प्राप्त हो और उसे दूसरा कुछ काम भी न हो, फिर भी स्त्रियों के दोषों का कथन सम्पूर्ण करने के पूर्व ही उसकी मृत्यु हो जायेगी।[27]" अब इतनी निंदा करने के बाद बाकी रह ही क्या जाता है?

शोषण नारी का

उपरोक्त से स्पष्ट है कि नारी की निंदा हब्शियों से तथा हरिजनों से कम नहीं हुई। साम्राज्यवादियों (Imperialists) ने पिछड़े हुए देशों में अपनी सत्ता कायम करके वहाँ के वास्तविक निवासियों के साथ जो व्यवहार किया अथवा पूँजीपतियों ने किसानों-मजदूरों-कारीगरों की जो लूट-खसूट की, उससे कोई कम शोषण पुरुष ने नारी का नहीं किया। अन्याय, असमानता तथा आतंक से, नारी से व्यवहार करने में पुरुष ने कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी। बिना वेतन के ही वह नारी को दासी बना कर रखता रहा है, उससे दहेज भी लेता रहा है, उसके घर वालों से विशेष अवसरों पर एक प्रकार का 'कर' भी वसूल करता रहा है और बात यहाँ तक ही

26. स्त्री स्वभाश्चलो लोके (आरण्यक 69.6)

27. यदि जिव्हा सहस्रं स्याज्जीवेच्च शरदा शतम्।
अन्यकर्मा स्त्री दोषान नुवत्वा निधनं व्रजेत।। (महा. अनुशासन 74.9)

नहीं, मरने के बाद उसे भी जिन्दा जल जाने की बात शास्त्रों द्वारा उसके कानों में फूँकता रहा है! पशु की तरह उसे वश में रखने के लिए मारना-पीटना भी वह उचित समझता रहा है, स्वर्ग, नरक, पाप, पुण्य की मनगढ़न्त परिभाषाएँ बना कर उसे विद्याध्ययन से वंचित कर, अपनी ही सेवा, पूजा इत्यादि करने के प्रपंच रचता रहा है। पुरुष को उकसाने वाली, शोषण की सम्मति देने तथा उसे बढ़ावा देने वाली, पुरुष को स्त्री का गुरु, देव और परमेश्वर बताने तथा दुराचारी पुरुष को देवता-तुल्य मनवाने वाली पुस्तकों को 'धर्मशास्त्र' की संज्ञा दी जाती रही है। बताइये, ऐसे घोर अनर्थकारी शास्त्रों के बारे में कोई आवाज़ भी नहीं उठाता और महिला सशक्तिकरण का वर्ष मनाया जा रहा है!

आचार्य विनोबा भावे कहते हैं कि स्त्री से जो व्यवहार होता है, यदि वह मेरे साथ होता तो मैं विद्रोह कर देता। परन्तु हम कहते हैं कि यदि वह 'स्त्री' नहीं हैं तो क्या हुआ, उन्होंने इस विषय में कोई ज़ोरदार कार्य क्यों नहीं किया? वे भूमिहीनों को ही शोषित वर्ग मान कर भूमि दिलाने के यत्न में लगे रहे, उनके अपने पास भूमि होने या न होने का प्रश्न नहीं। इसी प्रकार वह स्त्री नहीं हैं तो क्या हुआ, उन्हें सोचना चाहिए था कि भूमिहीनों से ज्यादा शोषित तो नारी ही है।

इसी प्रकार, भूतपूर्व न्यायाधीश खोसला साहिब ने नारी के बारे में लिखा है[28] कि– ''जब बस में यात्रा करती हुई नारी को कई पुरुष धक्का-सा लगा देते हैं, गली-मुहल्ले में युवक लोग सीटी बजा कर उसे छेड़ते तथा तंग करते हैं, सांयकाल अथवा रात्रि को जब वह किसी रास्ते से जाती है तो सुरक्षित अनुभव नहीं करती, उसका पति उसके साथ नौकरानी का-सा व्यवहार करता है, तब नारी सोचती है कि उसे पुरुष-जैसा स्थान प्राप्त नहीं है। विवाह के लिए दहेज ज़रूरी है और बहुत-से ग्रामों में तो नारी को पशु की तरह खरीदा और बेचा जाता है।'' परन्तु प्रश्न तो यह है कि बिल्ली को घण्टी कौन बाँधे? जिन पुराने धर्मशास्त्रों ने ऐसे रीति-रिवाज चलाये हैं, ऐसे दृष्टिकोण स्थापित किये हैं, पहले तो उनके बारे में कुछ किया जाना ज़रूरी है। जस्टिस खोसला साहिब तो कानून जानते थे। अच्छा होता यदि वे नारियों की इस विषय में कोई कानूनी सेवा करते; कोई ऐसा कड़ा कानून बनवाते जिससे पुरुष इस प्रकार के शोषण को छोड़े देते।

28. Sunday World, dt. the 29 Oct., 1972 : The Unequal half, Col 5.

हरिजनों के विषय में कानून बना दिये गये और उन्हें कई अधिकार दिये गये हैं परन्तु संसार की 50% आबादी के अधिकारों के लिए, इनकी जायज़ स्वतन्त्रता के लिए भी तो कोई ठोस कानून बना कर, उसे मनवाना चाहिए था ताकि शास्त्रों के ऐसे वाक्य छपना बन्द हों; उनके बारे में कुछ तो हो।

आज नारी को वासना की पुतलिका मान लिया गया है

आज शास्त्रों के ऐसे-ऐसे वाक्य पढ़ कर कि नारी में तो पुरुष से आठ गुणा अधिक काम-भाव होता है; वह तो पति, पिता, पुत्र इत्यादि में भेद नहीं करती और कि हज़ारों में से कोई एक ही पतिव्रता नारी होती है.....पुरुष नारी से ज़बरदस्ती काम-भोग भी करने से नहीं हिचकिचाता क्योंकि वह मन में माने बैठा है कि स्त्री काम-प्रधान तो है ही। प्रसिद्ध लेखिका कमला भसीन कपूर लिखती हैं कि 'पुरुषों को समाज यह बताता है कि पत्नी से वासना-भोग उनका अधिकार है। अत: जीवन-भर में शायद ही कभी ऐसा होता होगा कि पति अपनी पत्नी से स्वीकृति लेकर तथा उससे क्रूरता-रहित संसर्ग करता हो। जहाँ तक नारी का सम्बन्ध है, वह ऐसे संसर्ग को कोई सुन्दर बात नहीं मानती; वह इसे पति के प्रति अपने प्यार की पराकाष्ठा नहीं समझती। पति-पत्नी संसर्ग में ताल-मेल तो तभी हो सकता है जब दोनों में समानता हो...परन्तु चूँकि 'स्वामी' ही की इच्छा की सदा प्रधानता होती है, स्त्री के लिए तो संसर्ग एक प्रकार की वेश्यावृत्ति (Prostitution) ही है – उसे पति खाने को रोटी, पहनने को कपड़ा तथा रहने को जगह देता है, उसके बदले वह उसे सम्भोग के लिए स्वयं को दे देती है – या तो संसर्ग को सीधे शब्दों में 'बलात्कार' (Rape) ही कहना होगा। इस अर्थ में तो हर घर में पति द्वारा पत्नी से बलात्कार हो रहा है, सारे समाज में बलात्कार हो रहा है।[29]

29. ...Sexual life is yet another sphere where the master's will rules. If she has any opinion about it, it is usually that sex is something which is to be taken as yet another household duty. She has to suffer it, she knows...The husbands, on the other hand, have often had some apparent initiation. They are told by the society that sex in marriage is their right and they must enjoy it. It is seldom that husbands go about sex in an understanding, gentle manner.....For the woman it (sex) is not anything beautiful, it is not the culmination of her love for her husband. Sexual harmony is achievable only between two equal, two 'active' partners...Since the will of the master prevails, sex for the wife is either prostitution - she gives in return for the food, clothing and shelter - or is plain rape. Rape en masse, rape in every family by the husband of the wife night after night...."Sunday World": Unequal Half : Kamla Bhasin Kapoor.

आज कितनी ही नारियाँ होंगी जो अपनी इच्छा के बिना कामाधीन की जाती होंगी! कितनी ही अबलाओं से, उनकी इच्छा, अन्तरात्मा की आवाज़ और उनकी धार्मिक मान्यताओं के विरुद्ध, उनके स्वास्थ्य इत्यादि को हानि पहुँचा कर, ज़ोर-जबरदस्ती से वासना-भोग किया जाता होगा!!

आज यदि पत्नी इस विषय में थोड़ी भी अस्वीकृति का इशारा दे तो पति उसे खूब पीटता है क्योंकि ग्रंथों ने उसे बताया है कि पत्नी को ताड़ना देना उसका अधिकार है ताकि वह वश में रहे। अत: वह साम, दाम, दण्ड, भेद, सभी प्रकार से वासना-पूर्ति की बात मनवा कर ही छोड़ता है, यहाँ तक कि वह न्यायालय में भी वासना-पूर्ति के अधिकार (Conjugal right) के लिए आवेदन करता है; (देखिये तो समाज ने उसे यह कैसा अधिकार दे रखा है!) चूँकि शास्त्रों में लिखा है कि पत्नी को पति की हरेक आज्ञा का पालन करना ही है और कोई भी ऐसा कार्य नहीं करना जो पति को अप्रिय हो, अत: जब पति शास्त्रों की दुहाई देता है, तो अपनी आत्मिक उन्नति की भी परवाह न कर के पत्नी को पति के पाप-कर्म के प्रस्ताव को भी मानना ही पड़ता है, वरना शास्त्रों के रटुआ लोग उस नारी से कहते हैं कि तूने शादी ही क्यों की थी? इसका अर्थ तो यह हुआ कि शादी वेश्यावृत्ति के लिए सामाजिक एवं कानूनी स्वीकृति प्राप्त्यार्थ की गई और पिता ने अपनी पुत्री को इसीलिये ही दिया था! हाय! यह कैसा घोर अनर्थ है! यह कैसा सड़ा हुआ समाज है!! पुरुषों की तो बात छोड़िये, इन शास्त्रों को सुनते-सुनते स्वयं नारियों ने ही ऐसा मान लिया हुआ है कि शादी काम विकार के गर्त में गिरने के लिए ही की जाती है!! सुनते-सुनते उन्होंने भी झूठ को सत्य मान लिया है!

खैर, अब प्रश्न यह है कि जो सच्चरित्र, धार्मिक अभिरुचि रखने वाली स्त्रियाँ स्वेच्छा से ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहती हैं, कानून उनकी क्या सहायता करता है? मान लीजिये कि गीता के इस महावाक्य को पढ़ कर कि – "काम, क्रोध और लोभ नरक के द्वार हैं" – कोई नारी काम-भोग से हट कर रहना चाहती है तो उसे पति मारेगा; वह तो कहेगा कि तुमने शादी क्यों की थी? शादी तो घर वालों ने कर दी थी। यदि घर वालों ने शादी ज़बरदस्ती न भी की हो तब बाद में भी पवित्र रहने की ईश्वरीय प्रेरणा तो मिल सकती है। जब बाल्मीकि-जैसे डाकू किसी से प्रेरणा मिलने से डाका

डालना छोड़ सकते हैं, जब तुलसीदास पत्नी की देह में आसक्त होते हुए भी प्रेरणा मिलने पर काम विकार से हट कर संत बनने का यत्न कर सकते हैं तो नारी को भी अधिकार होना ही चाहिए कि वह भी पवित्र रह सके। विवाह और संसर्ग तो दोनों की स्वीकृति के आधार पर होते हैं, तब यदि पत्नी का मन सम्भोग के लिए स्वीकृति नहीं देता तब उससे सम्भोग करना तो एक प्रकार से बलात्कार ही हुआ। इसी प्रकार, यदि कन्या का विवाह भी उसकी इच्छा के बिना किया जाता है तो वह भी एक प्रकार से बलात्कार ही हुआ। यह बात केवल हम नहीं कह रहे, यह तो आज चरित्रवान नारी जाति की पुकार है। एक लेख का तो उद्धरण हमने ऊपर दिया ही है, उसके अतिरिक्त, स्वयं वेदों-शास्त्रों ने भी यह कहा है कि यदि कोई कन्या विवाह न करना चाहे तो उसे इस बात कि लिए विवश न किया जाय। उदाहरण के तौर पर अथर्व वेद में कन्याओं द्वारा ब्रह्मचर्य व्रत का पालन का उल्लेख है।[30] प्राचीन ग्रंथों में ऐसी अनेकानेक कन्याओं के नाम हैं जिन्होंने जीवनपर्यन्त ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया।[31] विवेक भी यह कहता है कि जो ईश्वरानुभूति या विकारों पर विजय के लक्ष्य से सम्भोग का जीवन नहीं जीना चाहता, उसे तो इस बात की सहमति या स्वीकृति मिलनी ही चाहिए।

इसके लिए अब क्या हो?

अत: दो-ढाई हज़ार वर्षों से होते आये शोषण का अन्त करने के लिये तथा नारियों को श्रेष्ठाचार एवं ब्रह्मचर्य रूप उत्तम व्रत के लिए स्वतन्त्रता देने के लिए अवश्य ही कार्यवाही करनी चाहिए। आज जो पुरुष ने यह समझ रखा है कि पत्नी की स्वीकृति हो या न हो, सम्भोग उसका अधिकार (Conjugal right) है, इस भ्रान्ति के निवारण के लिए कुछ तो किया जाना चाहिए।

हमारे विचार में इस विषय में कानून में यह दिया जाना चाहिए कि पत्नी की इच्छा के बिना किया गया सम्भोग भी बलात्कार माना जायेगा। यदि पति इसके लिए पत्नी को बाध्य करेगा या पीटेगा तो कानून उसे दण्डित करेगा। हाँ, यदि पति सम्भोग के बिना नहीं रह सकता है तो उसे पवित्र रहना चाहने वाली पत्नी को

30. अथर्व वेद 11, 5, 18।

31. देखिये – महाभारत में नारी, पृष्ठ 22

तलाक (Divorce) देने का अधिकार होगा।

दूसरे, सरकार की ओर से निश्चित की गई समिति (Commitee on the Rights and Status of Women) ने जो रिपोर्ट पेश की थी, उसमें उसने सिफारिश की थी कि सरकार ऐसे 'नारी गृह' कायम करे जहाँ पर ऐसी नारियों को ठहराया जा सके जिन्हें उनके पति ने पीटा हो या जिनका शोषण किया जाता हो।[2] ऐसे 'नारी गृहों' में स्पष्ट रूप से उन माताओं को भी प्रवेश दिया जाय जिन्हें पति काम-चेष्टा के अधीन हो कर पीटते हैं या जिन कन्याओं को माता-पिता विवाह के लिए पीटते हैं।

तीसरे, भारत सरकार के विधि मन्त्रालय (Union Ministry of Law and Justice) ने ग़रीबों को नि:शुल्क कानूनी सहायता (Free Legal Aid) देने के बारे में इस विषय की जानकारी की एक समिति (Expert Commitee) बनाई थी; उसने यह सिफारिश की थी कि इस विषय में एक कारपोरेशन बनाई जाय। इसके अनुसार हर ज़िले में नि:शुल्क कानूनी सहायता की व्यवस्था की जायेगी। इन्हें प्रादेशिक सरकार अनुदान (Grants) देगी तथा बार-बार होने वाले खर्च के लिये भी सहायता देगी।[3] क्या ही अच्छा हो यदि वह समितियाँ पवित्र रहने की इच्छा वाली उपरोक्त प्रकार की कन्याओं तथा माताओं को भी नि:शुल्क कानूनी सहायता दें। जिन माताओं को पति पीटते तथा घर से निकाल देते हैं, या जिन कन्याओं को माता-पिता घर से निकल जाने के लिए कहते हैं, उनसे अधिक निर्धन और कौन होगा? कन्या तो सब से ग़रीब होती है। अत: इन्हें भी शोषण से बचाने के लिए ये कदम लिये जाने चाहिएँ। यदि इस विषय में कोई ठोस कदम न लिया गया तो महिला सशक्तिकरण वर्ष मनाने का विशेष क्या परिणाम माना जायेगा?

---

32. The Hindustan Times, dt. 16 Feb., 1975 : `Shakti in Chains', Col. 4. ``The Report of the Committee on the Status of Woman points out the need to provide homes where victims of wife-beating and exploitation can go...." - Promilla Kalhan.
33. The Hindustan Times dated the 20th, May, 75.

प्राचीन काल में नारी के प्रति वासनात्मक दृष्टिकोण और उसके परिणामस्वरूप शोषण

एक समय था जब कि नर और नारी के सम्बन्धों में आध्यात्मिकता और दिव्य मर्यादा हुआ करती थी। तब नारी को विषय-वासना का साधन न मान कर 'देवी' माना जाता था। भारत में आज भी कन्याओं-माताओं के नाम प्राय: 'देवी' शब्द को लिये होते हैं (यथा शान्ति देवी; यमुना देवी) या वे किसी दिव्य गुण ही के बोधक होते हैं (यथा सन्तोष कुमारी ; स्नेह लता) – ये इस बात के प्रतीक हैं कि पूर्वकाल में नारी कभी 'देवी' मानी जाती थी। तब पति धर्म-पति और पत्नी सच्चे अर्थों में धर्म-पत्नी होती थी। सतयुग, जिसे कि 'देव युग' भी कहा गया है, में नर-नारियों के व्यवहार में पवित्रता, सदाचार अथवा सतोगुण प्रत्यक्ष और असंदिग्ध रूप में थे और तब नारी को उच्च स्थान तथा वांछित स्वतन्त्रता भी प्राप्त थी। 'देवत्व' और 'नारी का सम्मान' दोनों सहगामी होते हैं, तभी तो मनु ने कहा है कि – ''जहाँ-जहाँ नारियों की पूजा होती है, वहाँ देवता रमण करते हैं।''[1] इन दोनों के सहचर रूप में उपस्थित होने से ही 'सतयुग' का दूसरा नाम 'देवयुग' भी है। प्राचीन काल का जो-कुछ भी साहित्य आज उपलब्ध है, उसका अनुशीलन तथा अनुसंधान करने वाले लोगों ने भी इस बात को माना है कि प्राचीन काल में नारी को उच्च स्थान प्राप्त था। नारी के विषय में प्रसिद्ध अनुसंधायक – आलतेकर[2] – तथा भगवत शरण उपाध्याय[3] ने भी अपनी-अपनी पुस्तकों में इस बात को माना है। इतिहासकारों ने यह माना है कि ऋग्वेद के समय में महिलाएँ विदुषी हुआ करती थीं; वे वाद-विवाद में भी भाग लेती थीं; वे विवाह के मामले में भी काफी स्वतन्त्र थीं; विवाह के पश्चात् पति के घर में भी उनका मान होता था। बाद में बौद्ध काल में भी नारियों को विवाह करने या ब्रह्मचर्य पालन करने एवं साध्वी बनने का अधिकार होता था। जब बाद के युगों में नर-नारी पवित्रता में, ब्रह्मचर्य में, सात्विकता में तथा परमार्थ में इतनी रुचि रखते थे तो सतयुग और त्रेता युग में तो उनका दिव्य गुण सम्पन्न

1. नार्यस्तु यत्र पुज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:।
2. इनकी पुस्तक का नाम है – 'पोजीशन ऑफ विमेन'
3. इनकी पुस्तक का नाम है – 'विमेन इन ऋग्वेद'

होना तथा दैवी मर्यादा से युक्त होना स्वत: सिद्ध है।

हाँ, बाद में नर-नारी देह-अभिमानी होते गये और उनके सम्बन्धों में भी विकार आते गये। पुरुष चूँकि शारीरिक रूप में, नारी की तुलना में अधिक समर्थ था, अत: तब से लेकर समाज पुरुष-प्रधान (Male-dominated) बनता गया। हुआ यह कि मनुष्य ने नारी को अपनी दासी बना कर रखने के लिये अथवा अपने वश में कर के रखने के लिये विभिन्न विधि-विधान रचने शुरू कर दिये। ऋषियों-मुनियों अथवा पण्डितों-पुरोहितों ने, जो कि पुरुष वर्ग के ही थे, नारी के स्थान को गौण घोषित किया। चूंकि नारी ही सन्तति धारण करती थी और बाद में सन्तान का पालन-पोषण भी वही करती थी, इसलिये उसे अधिकतर घर की चार-दीवारी में ही रहना पड़ता था और जीवन-निर्वाहार्थ कमाने तथा घर के प्रयोग की सामग्री जुटाने के लिए पुरुष को ज्यादातर बाहर जाकर काम करना पड़ता था, फलत: पुरुष आर्थिक रूप से भी स्वयं को नारी की अपेक्षा अधिक उच्च और समर्थ अनुभव करने लगा और अधिकतर बाहर रहने के कारण वह स्त्री के चरित्र को भी संदेह से देखने लगा। परिणामस्वरूप देह-अभिमानी एवं धन-अभिमानी मनुष्य ने नारी को अपने अधिकार में रखना शुरू किया और वह उसका शोषण भी करने लगा। अब नर अपनी कमाई हुई पूँजी तथा घर की सामग्री के साथ-साथ पत्नी को भी अपनी सम्पत्ति (Property) ही मानने लगा। अब पत्नी की उपयोगिता उसने केवल 'भोग्या' अथवा सन्तान-उत्पत्ति के साधन के रूप में तथा घर की दासी के रूप में ही मानना शुरू की। धीरे-धीरे नारी के प्रति पुरुष का यही दृष्टिकोण परिपक्व होता गया। अब वह नारी को दासी, वासना की गुड़िया या निजी सम्पत्ति समझ कर व्यवहार करने लगा।

दासी और बान्दी प्रथा [4]

इतिहास इस बात का साक्षी है कि लगभग दो-ढाई हज़ार वर्षों से पुरुष नारी जाति से अनेक प्रकार से खिलवाड़ करता आया है। इतिहास के पन्ने पलटने से स्पष्ट विदित होता है कि पुराने ज़माने में जब राजाओं-महाराजाओं या जागीरदारों के विवाह होते थे तब यह प्रथा थी कि राजकुमारी का पिता दहेज के साथ-साथ,

4. 'महाभारत में नारी' पृष्ठ 22

अपनी सामर्थ्य के अनुसार, राजकुमार को सैंकड़ों हज़ारों युवतियाँ भी देता था। इन्हें 'दासियाँ' अथवा 'बान्दियाँ' कहा जाता था। मुसलमानों के यहाँ इन्हें 'लौंडियाँ' या 'खिलवत' कहा जाता था। इन्हीं का एक नाम 'गोली' भी होता था। योरुप में भी राजाओं के विवाह के अवसर पर इस प्रकार की प्रथा थी। कहलाने को तो ये 'बान्दियाँ' अथवा 'दासियाँ' ही थीं परन्तु वास्तव में राजा इनसे दासियों का काम लेने के अतिरिक्त इनसे भोग भी किया करता था। ये राजाओं और नवाबों के ज़नानखानों, खिलवतखानों, हरमों (Harems) इत्यादि की चार दीवारी में रहती थीं और राजा इनसे चाहे जब मनमाना सम्भोग करे, उसे किसी की रोक-टोक न थी। यदि ये गर्भवती हो जातीं तो राजा इनका विवाह किसी दास या गुलाम से कर देता ताकि उसके अपने नाम पर धब्बा न लगे। देखिये तो नारी जाति के साथ कैसा घिनौना दुर्व्यवहार किया जाता था! राजकुमारी का जो पिता दहेज के साथ इन दासियों को देता था, वह जानता था कि ये दासियाँ एक प्रकार से राजकुमारी की सौतें ही बन कर रहेंगी परन्तु चूँकि उसका अपना जीवन भी ऐसा ही दुराचारी होता था, प्रथा भी नारी को 'भोग्या' मानने की थी और इन बान्दियों की सन्तति को राजा का उत्तराधिकारी बनने का तो प्रश्न ही नहीं उठता था, अत: वह निस्संकोच ही नहीं, बल्कि सहर्ष (वास्तव में निर्लज्ज होकर) सैंकड़ों दासियाँ राजकुमारी के साथ भेंट कर देता।

फिर, ध्यान देने के योग्य एक बात यह भी है कि जब राजा मरता था तो उसकी रानी के साथ प्राय: बान्दियों को भी राजा की चिता के साथ ही सती हो जाना पड़ता था। यद्यपि राजा इनका 'पति' नहीं होता था तथापि इन्हें भी प्रथा के कारण मजबूर होकर या स्वेच्छा से, रानी के साथ ही राजा के शव के निकट भस्म हो जाना पड़ता था। अब आप ही देखिये कि एक पुरुष (राजा) की खिलवाड़ के लिए, उसके वासनात्मक 'मनोरंजन' के लिए, उसकी काम-पिपासा को तृप्त करने के लिए सैंकड़ों युवतियों को 'विष की गुड़िया' की तरह जीना और फिर जल जाना होता था!!

---

5. महा. सभा. 45.20.477 तथा 54.12.14 तथा 190.163 तथा विराट 17.17 तथा उद्योग 88.16 तथा शान्ति 44.6.9

प्रजा में से युवतियों को चुनना

परन्तु इतने से ही राजा को सन्तोष नहीं होता था। राजाओं, जागीरदारों तथा उनके मुखियों की काम-वासना सीमाहीन होती थी। यदि राह जाते हुए, नगर में, राजा की किसी सुन्दर युवती पर नज़र पड़ जाय तो उसे भी राजा की भेंट होना पड़ता था। वैसे भी राजा के अपने शासन-क्षेत्र में जो सुन्दर युवतियाँ होतीं थीं, यदि उनमें से किसी के बारे में प्रशंसा की खबर राजा के कानों में पड़ जाय तो उसे भी राजा अछूता नहीं छोड़ता था। राजा के कारिन्दे उस तक पहुँच जाते थे और धन या पद के लालच से, भय देकर या अपहरण करके भी उसे रंग महल में ले आते थे। राजा अधिकार पूर्ण उसका भी शील भंग कर देता था क्योंकि पुरुष के लिए स्त्री भोग्या जो थी।

राजाओं द्वारा युवतियों का अपहरण

अपने ही शासन-क्षेत्र की बात छोड़ दीजिए, वे दूसरे के शासन-क्षेत्रों से भी सुन्दरियों को जैसे-कैसे लाने में सब प्रकार के हथकण्डे अपनाते थे। अलाउद्दीन ने रानी पद्मिनी को पाने के लिए क्या कुछ नहीं किया? क्या अलाउद्दीन की पत्नी नहीं थी, क्या उसके पास पहले ही बेगमें या रखैलें कम थीं? नहीं; पुरुष अपनी काम-वासना के लिए नारी को हर प्रकार से हथियाना चाहता है। अत: अलाउद्दीन ने पहले तो चित्तौड़ पर चढ़ाई की, किले का घेराव भी किया परन्तु फिर भी जब पद्मिनी हाथ नहीं लगी तब भी वह निर्लज्ज व्यक्ति लौटा नहीं बल्कि उसने कई चालें चलीं! है कोई अन्त पुरुष की भोग-पिपासा का? फिर इधर पद्मिनी के साथ भी राजा की कितनी रानियाँ थीं? कहते हैं कि अलाउद्दीन के किले में घुसने की खबर सुन कर 16000 रानियाँ और दासियाँ इकट्ठी ही चिता में जल गईं!! देखिये न, इधर भी पद्मिनी जैसी परम सुन्दर रानी होने पर भी कितनी रानियाँ और दासियाँ थीं!!

अभी जब अंग्रेज़ों ने भारत को छोड़ा तब हरेक राजा के पास कितनी रखैलें थीं इसकी चर्चा करते ही चित्त में ग्लानि होती है। राजाओं का कितनों से अवैध सम्बन्ध होता था, इसका हिसाब लगाना ही मुश्किल है। कितने ही राजाओं ने

सुन्दर युवतियों को पाने के लिए जो साम, दाम, दण्ड, भेद का तरीका अपनाया और अपहरण का भी रास्ता लिया – इसके समाचार तो पत्रों-पत्रिकाओं में छपते भी रहे हैं।

जागीरदारों, मुखियों इत्यादि के काले कारनामे

ऊपर जो-कुछ राजाओं के बारे में बताया गया है, वह जागीरदारों, नवाबों, गाँवों के मुखियों इत्यादि के बारे में भी सत्य है। राजा का प्रभाव तो जनता पर पड़ता ही है। यदि राजा दुराचारी हो तो प्रजा भी मनमानी करने लगती है। आज भी चंबल घाटी के बागियों का कहना है कि उनमें से बहुत-से तो इस कारण से दस्यु (डाकू) बने कि उनके गाँव में किसी जमींदार, मुखिया या जागीरदार ने किसी की कन्या या माता-बहन को अपने दाव में फंसाना चाहा था और उसका सामना करने की वजह से उन्हें अपना गाँव छोड़ कर चम्बल की घाटी की राह लेनी पड़ी।

पुनश्च, आज भी भारत के कई प्रदेशों में यह रिवाज है कि एक पुरुष की दो-तीन रखैलें भी होती हैं।

देवताओं तक के बारे में कथनोपकथन

राजाओं की इतनी नारियाँ होने की बात इतनी प्रचलित थी कि महाभारतकार ने तो पवित्र देवता श्रीकृष्ण तक के बारे में भी यह कह दिया है कि उनकी भी सोलह हज़ार एक सौ आठ रानियाँ थीं, जिनमें से 16000 तो मगध के राजा जरासंधि को मार कर उसके किले से लाई गई थीं। श्रीकृष्ण पर यह लांछन तो सरासर निराधार और मिथ्या ही है परन्तु इससे यह अवश्य पता चलता है कि सैंकड़ों-हज़ारों की संख्या में रानियाँ या दासियाँ रखने की प्रथा बहुत पुरानी है। जब देहली में अंग्रेज़ों के ज़माने में दरबार लगा था तब उस समय के लोगों का कहना है कि उस दरबार में शामिल होने वाले राजा, महाराजा, नवाब, राणा इत्यादि अपनी रानियों या बेगमों से विशेष गाड़ियाँ भर कर लाये थे। अत: यह बात असंदिग्ध है कि चिरातीत से पुरुष, नारी के प्रति वासना का ही दृष्टिकोण अपनाता आया है।

देवदासी प्रथा

केवल राजा, नवाब, जागीरदार या मुखिया लोग ही नारी को 'भोग्या' मान

कर उससे वासनात्मक व्यवहार करते हों, ऐसी बात नहीं थी, बल्कि पुरोहितों और पुजारियों का भी बुरा हाल था। कुछ समय पहले तक भारत में, मन्दिरों में 'देव-दासियाँ' रखे जाने का रिवाज भी था (अब भी दक्षिण भारत में तथा अन्य कहीं-कहीं ऐसा रिवाज अल्प मात्रा में चला आ रहा है)। कई माता-पिता अपनी कन्या को मन्दिर में जाकर देवार्पित कर आते थे। वह कन्या बड़ी होकर मन्दिरों के पुजारियों के पास, देवता को रिझाने के लिये, नृत्य किया करती थीं। इन्हें ही 'देव-दासियाँ' कहा जाता था। इनके लिए नियम यह था कि यह आजीवन-ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करेंगी, अविवाहिता रहेंगी; वे देव-पूजन के समय देवता को प्रसन्न करने के लिए केवल नृत्य ही करेंगी। ऐसा माना जाता था कि उनका विवाह देवता के साथ हो चुका है, इसलिए अब वे किसी पुरुष के साथ संसर्ग नहीं कर सकतीं थीं। परन्तु यद्यपि उन देव-दासियों को देवार्पण करते समय भावना यही होती थी तथापि यह बात इतिहास-प्रसिद्ध है कि पुजारी और धर्माचार्य लोग उन्हें अपने जाल में फँसा लेते थे और अपने भोगने की सामग्री बना लेते थे। महमूद ग़ज़नवी ने जब सोमनाथ पर आक्रमण किया तो उसका सामना करने वाले राजा भीम देव का मन्दिर की देव-दासी के साथ काम-लीला करना प्रसिद्ध है। यह भी इतिहास से स्पष्ट है कि वहाँ का मुख्य पुजारी उस प्रमुख देव-दासी पर आसक्त था और उसके साथ उसके सम्बन्ध नैतिक नहीं थे। जब उसने देखा कि उसकी वासना का खिलौना, राजा भीम देव ले जा रहा है तो राजा से उसकी शत्रुता हो गई थी और उसी शत्रुता को ही, लड़ाई में हिन्दुओं के हारने का एक मुख्य कारण बताया जाता है। देव-दासियों से इसी प्रकार की रंगरेलियाँ कई पूजा-स्थानों पर हुआ करती थीं। हाय-हाय पुरुष ने देवार्पित की हुई गोया देव से विवाहित मानी हुई कन्याओं को भी, अपने ही वासना-भोग से मुक्ति नहीं दी!! तो बताइये कि पुरुष ने स्त्री को इसके अतिरिक्त अन्य किसी दृष्टि से देखा भी? मनु ने तो यहाँ तक कहा है कि पिता अपनी पुत्री के साथ कभी अकेला न बैठे और पुत्र कभी अपनी माता के साथ अकेले में न बैठे! अवश्य ही मनु जी ने या मनुस्मृति लिखने वालों ने देखा होगा कि पुरुष की दृष्टि वासना से रंगी हुई है!

यज्ञान्त में युवतियों का दान

देव-दासियों के साथ अनैतिक सम्बन्ध के अतिरिक्त, समाज में एक अन्य प्रकार से भी नारियों का शील भंग होता था। पुरानी पुस्तकों का अनुशीलन करने वाले लोगों का कथन है कि पुराने ज़माने में यह भी रिवाज था कि बड़े-बड़े यज्ञों की पूर्णाहूति होने पर भी यज्ञ-कर्त्ता राजा या धनाड्य लोग यज्ञ कराने वाले पुरोहितों को धन-धान्य-वस्त्रादि के साथ युवतियों को भी दक्षिणा के रूप में दिया करते थे। वे पुरोहित उनसे दासियों का काम तो लेते थे ही परन्तु साथ में उनसे अनैतिक कर्म भी करते थे। तो देखिये, इतना सारा यज्ञ करने के बाद भी मनुष्य की स्थिति क्या होती थी और उसकी दृष्टि कैसी होती थी। हो सकता है कि सभी पुरोहित और धर्माचार्य भोगी न हों परन्तु फिर भी नारी के प्रति 'दासी' दृष्टि तो होती ही थी और कइयों की तो विलासोन्मुख वृत्ति भी होती थी, तभी तो मनु ने ऐसे वचन कहे हैं।

असूर्यपश्या

चूँकि राजाओं और नवाबों की, मुखियों और ज़मींदारों की, पुरोहितों और पुजारियों की, आक्रमणकारियों और सत्ताधारियों की अर्थात् सामान्य रूप से पुरुष की तब नारी के प्रति भोग-विलास की दृष्टि पक्की होती गई थी, इसलिये ही तो आगे चल कर नारी का घूँघट में, बुर्के में, घर की चारदीवारी के अन्दर, पर्दे में रहने का रिवाज शुरू हुआ था। इसी डर से कि पुरुष किसी स्त्री के सौन्दर्य को देख कर उस पर कामासक्त न हो जाये, नारी को अपना मुख छिपाना पड़ता था। इतना ही नहीं उन्हें ऐसे पर्दे में रखने का रिवाज़ चला कि वे बेचारी (पुरुष की कामासक्त वृत्ति से बचने के लिए) सूर्य को भी न देख सकती थीं। अत: वे 'असूर्यपश्या' – सूर्य को देखे बिना घर की कोठरी में पर्दे के पीछे ही जीवन गुज़ार देतीं। देखिये तो, नारी को पुरुष की इस दूषित दृष्टि के कारण शताब्दियों तक कितना कष्ट सहन करना पड़ा!

नगर वधू की कुप्रथा

ऐसा बताया गया है कि उस समय कई जगह ऐसा भी रिवाज था कि नगर

की किसी सुन्दर और चंचल षोडश वर्षीय कन्या को पुरुष वर्ग 'नगर वधू' के रूप में निश्चित करता था। इस बाला को पूरे नगर के पुरुषों के लिए वधू के रूप में माना जाता था। नगर के युवक-वृद्ध, धनाड्य-निर्धन, सभी नागरिक इस 'वधू' के साथ हास-विलास अथवा 'मनोरंजन' कर सकते थे। उसे किसी एक पुरुष की वधू बनने की आज्ञा नहीं होती थी, बल्कि वह सारे नगर के खेल-विलास के लिए होती थी; अब आप ही किंचित विचार कीजिए कि नारी के साथ किस दृष्टि से व्यवहार होता था?

विष कन्या के रूप में दुरुपयोग

पुराने ज़माने में यह भी रिवाज था कि किसी ऐसी युवती को, जो अतीव सुन्दर हो, 'विष कन्या' बना दिया जाता था। जिसे 'विष कन्या' बनाने का विचार होता था, उसे प्रारम्भ से ही नशीले पदार्थों का सेवन कराया जाता था। ऐसे मादक पदार्थों का उसे ऐसा अभ्यस्त कर दिया जाता था कि धीरे-धीरे मादक द्रव्यों की मात्रा काफी बढ़ाई जाती थी। उसे भांग, चरस, धतूरे तथा अन्य उग्र नशे वाले पदार्थ दे-देकर उसके सारे शरीर को विषैला बना दिया जाता था। फिर जब किन्हीं शत्रुओं से उस नगर अथवा देश के लोगों का सामना होता था तब इसे 'विष कन्या' के रूप में प्रयोग किया जाता था। शत्रु इसके सौन्दर्य पर लट्टू हो जाता था और उससे शारीरिक सम्पर्क करता था तथा अपनी वासना को भोगने की चेष्टा करता था। परिणामस्वरूप वह उसके विषैले शरीर के कारण मृत्यु को प्राप्त होता था।

सरायों और विश्रामशालाओं में दुरुपयोग

इसी प्रकार उन दिनों सरायों और विश्रामशालाओं में भी युवतियों को इस आशय से रखा जाता था कि यात्री लोग उनसे 'मनोरंजन' कर सकें और अपने घर से दूर होने के कारण यहाँ वासना-पूर्ति की सुविधा पा सकें। अन्दाज़ा लगाइये कि पुरुष ने नारी के साथ खिलवाड़ नहीं की तो और क्या किया! उसने नारी के शरीर को सम्भोग की वस्तु नहीं माना तो और क्या माना? उस समय के पुरुष समाज पर उपरोक्त काले धब्बे तो हैं ही, उनके अतिरिक्त बेसवाओं, वेश्याओं, गणिकाओं

इत्यादि के रूप में जो वह नारी का दुरुपयोग करता था उस घिनौने कृत्य का तो कहना ही क्या!

हम अब यदि पुरुष वर्ग को यह ईश्वरीय सन्देश दें कि वह इस 'अपघात' को, 'काम' की कटारी के आघात को बन्द करे तो क्या अब भी वह इस बात को नहीं मानेगा? अब तो पाप का घड़ा भर चुका है और यह संसार काम विकार रूपी अग्नि से जल रहा है। क्या अब पुरुष इस विष को छोड़ ज्ञानामृत पीयेगा और नारी पर काम-कुल्हाड़ा चलाने की बजाय आत्मिक स्नेह, पवित्र स्नेह तथा दिव्य स्नेह देगा?

नारी के प्रति 'भोग्या' की दृष्टि होने से आज के समूचे समाज की दुर्दशा

आज के मनुष्य की मनोस्थिति तो भयावह है। पुरुष अपनी राह से भटक कर बहुत दूर निकल गया है। गोया मनुष्य वासना का जीता-जागता पुतला बन चुका है। वह राह चलते भी नारी को कामुकता से देखता है। उसकी दृष्टि में तो काम का स्थायी वास है। कालेज में जाने वाले कई युवक, कन्याओं से खूब छेड़-छाड़ (Eve-teasing) किया करते हैं। कालेज का नया वर्ष शुरू होने पर वे छोटे शहरों या गाँव से आने वाली बालाओं की किस प्रकार रेगिंग (Ragging) किया करते हैं – इस विषय में समाचार पत्रों में बड़े दु:खद समाचार छपा करते हैं। स्वयं विश्वविद्यालय के अहाते में युवक अपने साथ पढ़ने वाली कन्याओं से सद्व्यवहार करने की बजाय उन्हें छेड़ते हैं। इस प्रकार की वार्ताओं के आम हो जाने के कारण ही सरकार को स्त्रियों से छेड़-छाड़ (Eve-teasing) सम्बन्धी कानून बनाना पड़ा और विश्वविद्यालय के अहाते में सफेद कपड़ों में पुलिस तैनात करनी पड़ी। कुछ समय पहले देहली विश्वविद्यालय के कुछ छात्रों द्वारा एक छात्रा को फँसा कर उसका शील-भंग करने का समाचार छपा था। कितनी ही बालाएँ और अधिक परेशान किये जाने अथवा मृत्यु का शिकार होने के भय से अपने मन का दु:खड़ा बता नहीं पातीं। हर आए दिन बसों में कन्याओं के साथ युवक जो छेड़-छाड़ करते, उन पर भद्दे मज़ाक करते, अश्लील गीत गाते, उनके शरीर को वासनात्मक भावों से स्पर्श तक करते हैं, परन्तु हालत ऐसी है कि इस बढ़ी हुई गुण्डागर्दी के विरुद्ध कोई आवाज़ भी नहीं उठा सकता क्योंकि हरेक को अपनी रक्षा के लिए भी खतरा रहता है। हमारे देश की पूर्व प्रधानमंत्री, इन्दिरा गाँधी जी का कहना था कि जब वे पढ़ा करतीं थीं, तब उस युवावस्था में उनकी ओर भी एक युवक घूरा करता था और रास्ते में आकर कुछ आपत्तिजनक हावभाव अथवा भाषा का प्रयोग करता था। आज ट्रैफिक (Traffic) द्वारा होने वाले हादसों (Accidents) के मामलों का अध्ययन करने वाले विज्ञजनों का भी यही कहना है कि बहुत-सी दुर्घटनाएँ तो इस कारण होती हैं कि कार इत्यादि चलाने वाले पुरुष, किसी युवती की ओर देख रहे होते हैं। गोया आज तो मनुष्य की दृष्टि-वृत्ति और कृति 'काम' वासना के रंग में पूरी रंग

चुकी है। विद्यालय में पढ़ने वाले छात्रों, जिनसे ब्रह्मचर्य का पालन करने की आशा की जाती है, उनकी ही लगाम टूट या छूट चुकी है। पाश्चात्य देशों से जो पर्यटक (Tourists) हमारे देश में आते हैं, उनमें से महिलाएँ प्राय: यह कहती हुई सुनी जातीं हैं कि भारत के लोग काम-क्षुधा से पीड़ित (Sex-hungry) हैं। अभी पिछले दिनों भी शिमला में छात्रों द्वारा और उससे पहले एक बस कण्डक्टर (Bus Conductor) द्वारा बलात्कार किये जाने की घटनाएँ हुईं। इस देश के पतन का तो कोई अन्दाज़ा ही नहीं! घर-घर विषय-वैतरणी बन चुका है। पुरुष इतना तो विकार के अधीन हो चुका है कि पशुओं को भी मात दे चुका है।

नावल, सिनेमा इत्यादि

आज यहाँ जो फिल्में बनती हैं, उनकी कथा-वस्तु का केन्द्र-बिन्दु किसी-न-किसी प्रकार की कामुकता (Love, वास्तव में Sex) ही होता है। जो भी उपन्यास लिखे जाते हैं, उनमें भी काम-कहानी का काफी मुख्य स्थान होता है। पत्रों-पत्रिकाओं में भी सिलसिलेवार जो कहानियाँ छपती हैं, उनका भी 'थीम' (Theme) घूम फिर कर यहीं आता है।

कैबरे नृत्य इत्यादि

फिर, अब पाश्चात्य देशों की तरह यहाँ कैबरे नृत्यों का भी रिवाज़ ज़ोर पकड़ रहा है। बालरूम डाँस भी खूब होते हैं। पहले तो मनुष्य फिल्म देखने विशेष रूप से जाता था, अब घर में केबल टी०वी० पर सारा परिवार – ससुर, बहू, लड़कियाँ, लड़के सभी एक-साथ बैठ कर काम विकार के दृश्यों और संवादों से भरी फिल्म देख लेते हैं। स्वयं पूर्व प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी जी ने भी इस बात को माना था[1] कि स्त्रियों से जो युवक छेड़-छाड़ करते हैं तथा दृष्टि में जो भोग-भावना उभरती है, उसके लिए सिनेमा भी एक हद तक ज़िम्मेवार है।

यह कैसी अजीब कहानी है कि देश की बालाएँ अथवा महिलाएँ नि:वस्त्र होकर पुरुषों के सामने नाचतीं हैं और इसे नाम दिया जाता है – 'मनोरंजन'। स्पष्ट

1. ईवज़ वीकली (Eves Weekly), 10 मई, 1975 : 'Indira Gandhi' talks about Woman.

है कि आज तो देशवासी महाभारत प्रसिद्ध कौरवों से भी आगे निकल चुके हैं। भरे हाल में दर्शकों के सामने नारी अंग-प्रदर्शन करती है और लोग इसे 'मन-बहलाव' का नाम देते हैं। देश के युवकों को इस प्रकार के दूषित वातावरण में उन्मत्त बनाया जाता है और सरकार ऐसे मनोरंजनों (Entertainment) पर प्रतिबन्ध लगाने की बजाय इस पर टैक्स बटोर कर ही खुश होती है!! चल-चित्रों में अभिनेत्रियाँ अभद्र प्रदर्शन, नज़ाकत, नारी अदाओं तथा कामोत्तेजक भाव-भंगिमाओं से दर्शकों को विलासोन्मुख बनाती हैं और लोग घरों में ऐसी अदाकारों के चित्र बड़े शौक से लगाते हैं तथा अपनी बहू-बेटियों को फिल्मों में साथ ले जाते हैं। शर्म की बात है शर्म की बात है! कहाँ गई इस देश की सात्विकता, यहाँ का शील, यहाँ का वर्चस्व और यहाँ की पवित्रता! काम ने तो सबको पछाड़ डाला है। ऐसा अन्धा बना दिया है कि उन्हें मालूम ही नहीं पड़ता कि बुरी तरह से लुट रहे हैं।

काव्य, कला, सौन्दर्य

जनता में से कभी कोई थोड़ा इस प्रकार की वेश्या-सम वृत्ति के बारे में पहले तो किसी तरह आवाज़ भी उठा लिया करता था परन्तु सरकार ने खोसला कमिशन बैठा कर सदा के लिए ऐसे लोगों को भी बिठा दिया। उस कमिशन ने कला-प्रदर्शन अथवा कथा-वस्तु के कारण जहाँ-कहीं भी ज़रूरी हो, चूमना तथा वासना की ओर ले जाने वाली (Suggestive) भाव-भंगिमा को स्वीकृति दे दी और इस प्रकार, भद्रता, कुलीनता, महानता और आध्यात्मिकता को एक साथ 'सती' कर दिया। अब यदि किसी के नग्न चित्र भी छप जायें तो कौन रोक सकता है? कला के नाम पर कुछ भी अश्लील (Obscene) नहीं है। सौन्दर्य-प्रदर्शन का लेबल लगा देने से स्वत: ही लाइसेन्स (Licence) मिल जाता है। 'मनोरंजन' का ढोल पीटने से विरोध की सब आवाज़ें दब जाती हैं। जबकि जनता और सरकार सभी एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं तो कौन किसको कहे?

इधर अब तो 'विश्व-सुन्दरी प्रतियोगिता' (World Beauty Queen Contest) 'भारत सुन्दरी प्रतियोगिता' इत्यादि के नाम से भी नारी शरीर का प्रदर्शन करने के बहाने ढूँढ़ लिये गये हैं। गोया पुरुष नारी के शरीर का खूब दुरुपयोग कर रहा है।

अब वह अपनी नैत्रिक वासना की तृप्ति के लिए सुन्दर-सुन्दर नामों वाले बहाने ढूँढ़ता है!!

काव्य में भी अब वासना-वृत्ति ही की प्रधानता हो गई है। विशेषकर उर्दू की नज़मों (कविताओं) में तो इसका प्रचुर प्रयोग होता है। गीतों में भी प्रेमी-प्रेमिका के विषय को लेकर, नारी के अंगों और अदाओं के बारे में ही राग अलापे जाते हैं और छोटे-छोटे बच्चे उन्हें गली-मोहल्लों, बसों और गाड़ियों में गाते-फिरते रहते हैं और ट्रांज़िस्टर ऑन करके उधर ही कान लगाए रहते हैं। गोया पुरुष-नारी के रंग-रूप की छटा पर इतना तो दीवाना हो चुका हुआ है कि उसे स्वप्न में और जागृत अवस्था में इसी की धुन सवार रहती है।

विचारधारा में 'काम' का प्रवेश

मनुष्य की इस वासना-वृत्ति के उच्छृंखल होने का एक कारण है, जर्मनी के डाक्टर एवं मनोवैज्ञानिक फ्रायड (Freud) के इस सिद्धान्त का प्रचार कि मनुष्य जो-कुछ भी करता है, काम-वृत्ति (Sex) से प्रेरित होकर करता है। फ्रायड ने अपनी पुस्तकों में यह मत व्यक्त किया कि मनुष्य और स्त्री परस्पर सहयोगी नहीं हैं बल्कि उनका तो एक-दूसरे से मानो सामना है और इसमें उनमें तनाव बना रहता है और यह तनाव (Tension) तभी दूर हो सकता है जब वे काम-क्रीड़ा करें। उसने यह ज़ोरदार शब्दों में कहा कि काम वासना की तृप्ति की खुली छुट्टी होनी चाहिए। वरना इसे दबाने से मनुष्य का स्वाभाविक एवं सामान्य (Normal) जीवन नहीं हो सकता। एक स्थान पर तो उसने यह भी कह दिया कि शरीर-रचना ही मनुष्य की नियति[2] अर्थात् मनुष्य की जैसी शारीरिक बनावट है, कुदरत की ओर से वैसा ही कार्य-कलाप करना उसके लिए निश्चित हो चुका है। गोया स्त्री और पुरुष सम्भोग के लिए बने हैं। उसके कथनानुसार जबकि पुरुष हरेक कार्य काम-प्रेरित होकर करता है तो उसका अपरोक्ष भाव तो यह हुआ कि स्त्री, पुरुष के लिए 'भोग्या' है और उन्मुक्त होकर, बिना संकल्प रोके (without repression) भोगना चाहिए। देखिए, दे दिया है न उसने मनुष्य को लाइसेंस (Licence)। उस द्वारा प्रतिपादित मत से यह तो सिद्ध हो ही गया कि वह मनुष्य के हरेक कर्म को वासना-प्रेरित मानता है। परन्तु बजाय आज के पतित मनुष्य

2. Anatomy is destiny.

को अपनी इस वृत्ति के शुद्धिकरण (Sublimation) के लिए सुझाव देने के, उसने उस पर यह ठप्पा लगा दिया कि यह वासना स्वाभाविक है!! हाय, उस दिन से लेकर घोर अनर्थ हो गया!! संसार की मिट्टी ही पलीद हो गई। यह दुनिया कामाग्नि से जल उठी। मनुष्य निर्लज्ज होकर 'काम' के इशारों पर नग्न-नृत्य करने लगा। वह अपनी भोगेन्द्रियों का पूरा और पक्का ही गुलाम हो गया और अपनी शक्ति को नष्ट करने के कुकृत्य में जम कर लग गया! उसने यह मान लिया कि स्त्री सचमुच भोगने के लिए ही बनी है।

स्वच्छन्द समाज का प्रादुर्भाव

उस दिन से लेकर समाज में मानो काम विकार की बाढ़ आ गई। लोगों ने फ्रायड (Freud) के विचार को एक डाक्टर, मनोवैज्ञानिक तथा मनो-विश्लेषक (Psycho-analyst) की शोध (Research) मान कर 'काम-वासना' को खुली छुट्टी दे दी। इसका परिणाम यह हुआ कि पाश्चात्य देशों में 'वासना-भोग' की खुली छूट को ही व्यक्तिगत स्वतन्त्रता (Personal freedom) अथवा निजी मामला (Individual life) माना जाने लगा और इसके बारे में समाज को या धर्माचार्यों को अंगुली उठाने का कोई अधिकार न रहा। यह माना जाने लगा कि भोग-विलास पर रोक-टोक या इसके विषय में सीमा-निर्धारण से मनुष्य का व्यक्तित्व (Personality) विकसित नहीं हो पाता और उसमें कई प्रकार की त्रुटियाँ (Disorders) आ जाती हैं तथा मनुष्य को कई मानसिक रोग हो जाते हैं। इस प्रकार का स्पष्टीकरण देकर जगह-जगह यह नारा लगाया गया कि वासना-भोग के लिए स्वच्छन्दता होनी चाहिए। इस प्रकार एक स्वच्छन्द समाज (Permissive Society), नहीं-नहीं उच्छृंखल समाज का प्रादुर्भाव हुआ। अब पुरुष काम से उन्मुक्त होकर नारी की चमड़ी के पीछे पड़ा। अब वहाँ इस विषय में कोई नैतिक मूल्य ही न रहे। ईसाई धर्म द्वारा काम-वासना सम्बन्धी उपदेशों को भी ताक पर रख दिया गया।

ब्रह्मचर्य और कौमार्य का नाश

ऊपर बताई मान्यताओं का परिणाम यह हुआ कि पवित्रता (Chastity), ब्रह्मचर्य (Celibacy) या शील (Virginity) का नाम ही न रहा। कुछ वर्ष पूर्व स्केन्डेनेवियन (Scandinavian) देश में एक सर्वेक्षण (Survey) किया गया उससे

यह निष्कर्ष निकला कि वहाँ एक कुँआरी कन्या भी नहीं थी। आज स्वीडन (Sweden) देश में तो बाग़ों और बगीचों में भी खुले आम 'काम' नाम का काला कर्म करने की कानूनी छूट है और इस कर्म को सामाजिक स्वीकृति प्राप्त है! अब यूरोप के हरेक देश में लड़के, लड़कियों को वासनात्मक सम्बन्ध अपना के दोस्त (Girl friend) बनाते हैं। वे उन्हें अपने घर में भी रख लेते हैं तो माता-पिता को कोई आपत्ति नहीं होती। लड़का भी अपनी 'मित्र-कन्या' के घर जाकर रहता है तो इसके लिए भी कोई माथे पर त्योरी नहीं लाता। विवाह से पहले ही दोनों गन्दे हो जाते हैं। देखिए न, कहाँ तक जा पहुँची है वासना-वृत्ति!

इस विषय में 'स्विट्ज़रलैण्ड' देश के एक लड़के (पीटर) से हुए संवाद से इस विषय पर और स्पष्ट पता चल जायेगा। पीटर ने एक प्रश्न के उत्तर में कहा कि "मैं विवाह करने से पहले किसी कन्या को एक सप्ताह या एक मास के लिए, नगर से बाहर घूमने-घामने ले जाऊंगा। यदि एक सप्ताह (या एक मास) के बाद भी वह मेरे साथ शय्या पर सोने को तैयार नहीं होती तो मैं उसे छोड़ दूँगा और किसी दूसरी कन्या से यही तजुर्बा दुहराऊंगा।....मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि इस प्रकार के तजुर्बों से लगभग सभी कन्यायें 16 या 18 वर्ष से पहले-पहले अपना शील खो चुकती हैं और पुरुष पतित हो चुके होते हैं...।"

जब पीटर से कहा गया –"क्या आप किसी कुँआरी (virgin) से शादी करेंगे?" तो इस प्रश्न को सुनते ही पीटर का चेहरा ऐसा हो गया जैसे कि वह भयभीत हो गया हो। उत्तर में वह बोला – "अरे भगवान बचाय, मैं ऐसा विवाह कभी नहीं करूँगा? यदि शादी से पहले कोई कन्या कुँआरी (सुरक्षित शील वाली) है तो उसमें अवश्य ही कुछ नुक्स होगा, कोई कमी होगी!" वह आगे बोला – "यदि कोई कन्या, जब उसका मुझसे परिचय हुआ, कुँआरी (virgin) होगी भी तो भी जब तक हम शादी करने की बात तय करें तब तक तो वह कुँआरी नहीं रही होगी।" अब सुन लिया आपने एक पुरुष के मुख से कि वह नारी से क्या करना चाहता है और वह उसे क्या समझता है?

इसके दुष्परिणाम

'काम वासना' के इस ताण्डव नृत्य के परिणाम बहुत ही भयंकर निकले हैं।

युवकों द्वारा कन्याओं से खिलवाड़ करने से समाज को भयावह चारित्रिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षति हुई है। प्राप्त समाचारों के अनुसार ग्यारह-बारह वर्ष की कन्याएं भी आज गर्भपात (Abortion) कराती हैं।[3] उक्त प्रेस-रिपोर्ट में बताया गया था कि एक 17 वर्ष की अविवाहित लड़की, जिसने गर्भपात कराया, पहले से ही चार बच्चों की माँ थी और इसी तरह की एक बीस वर्षीया लड़की गर्भपात कराने से पहले छः बच्चों की माँ थी। अकेले इंग्लैण्ड में सन् 1966 में, 16 वर्ष से कम आयु की उन कन्याओं ने जिन्होंने कानूनी तौर पर गर्भपात कराया, संख्या में 1,213 थीं। देखिये तो, लड़के कन्याओं को 'प्यार', पैसे इत्यादि का चकमा देकर किस प्रकार उन्हें अपनी वासना का शिकार बनाते हैं, जिसके परिणाम भी उन कन्याओं को ही अधिक भोगने पड़ते हैं।

पाप की अति

इस प्रकार, आप स्वयं ही सोचिये कि क्या वासना का भूखा मनुष्य अपनी चालाकी से अथवा शारीरिक तौर पर अधिक बलवान होने से नारियों का शिकार नहीं करता रहा? एक समाचार पत्र में एक समाचार में बताया गया था कि एक मनुष्य बूढ़ी नारियों से ही यह कुकर्म करके भाग जाता था।[4] उसने 23 बूढ़ी महिलाओं से ज़बरदस्ती सम्भोग (Rape) किया और यह काला कर्म करके, उनमें से 5 को तो मार भी डाला, उन बूढ़ी नारियों में से एक की आयु 76 वर्ष और एक की 93 वर्ष है। उसने सबसे पहले 93 वर्ष वाली नारी से बलात्कार किया और उसे मार डाला। इससे पहले एक ऐसा भी समाचार प्रकाशित हुआ कि एक व्यक्ति दिन उभरने से थोड़ा ही पहले साइकिल पर चढ़ कर जाता था और दीवार पर चढ़ कर घरों के भीतर चला जाता था और वहाँ सोई हुई नारी से पाप-कर्म कर आता था और वह समझती थी कि शायद वह उसका पति था; बाद में वह देखती थी कि वह घुस-पैठ करके आया था। किंचित सोचिए कि मनुष्य वासना-भोग में पशुओं को भी पछाड़ गया है या नहीं!

---

3. इण्डियन एक्सप्रेस, 1 मई, 1973 : 'Eleven years old Girls have abortions.

4. टाइम्ज ऑफ इण्डिया 27 मई, 1975 : Massive Hunt for man who rapes old women.

नारी का व्यापार और नारी द्वारा व्यापार

अग्नि की तरह बढ़ती हुई वासना की भूख के लिए मनुष्य ने क्या-कुछ नहीं किया? आज दिनोंदिन मनुष्य नये-नये जाल नारी को फंसाने के बनाता है। होटल, जो वास्तव में रहने या खाना खाने के लिए बनाए गए थे, वह भी आज नारी का व्यापार करने के अड्डे बन चुके हैं। आज यह चीज़ आम हो गई है। होटलों का काल गर्ल्स से सम्पर्क बना रहता है और वहाँ पैसे ले-देकर नारी की लाज लूटी जाती है, उन्हें रायल वेश्या बना दिया जाता है। इस विषय में नवभारत में 11 मई 1975 के संस्करण में 'नई हवा नई चुनौती' के शीर्षक के अन्तर्गत छपी निम्नांकित पंक्तियाँ पढ़िये –

"जर्मनी का एक नारी व्यापारी कुछ साल पूर्व न्यूयार्क के विश्व-विख्यात शेयर बाज़ार वालस्ट्रीट पहुँचा और उसने अमेरिकी पूँजीपतियों से कहा कि चकला-उद्योग काफी लाभ का धन्धा है। जर्मनी में इस व्यक्ति के कई होटल, जिनके कमरे वह ऊंची दर पर वेश्याओं को किराये पर देता। उसने अमेरिकी उद्योगपतियों को समझाया कि दुनिया में जितने उद्योग हैं, वे सब समय-समय पर मन्दी से प्रभावित होते हैं। एक यही उद्योग ऐसा है जिस पर किसी मन्दी या हैवी-दैवी का असर नहीं पड़ता। अमेरिकी पूँजीपतियों को यह सुझाव पसन्द आया और जर्मन 'उद्योगपति' के साथ साझेदारी में 'व्यापार' शुरू करने के लिए लाखों डालर की पूँजी जमा हो गई। पूँजी लगाने को जो व्यक्ति और संस्थाएँ आगे आईं, उनमें 'विश्वविद्यालय', बैंक और शेयर बाज़ार के दलाल शामिल थे।

हज़ारों साल से चला आ रहा एक निजी और निन्दनीय व्यापार, इस प्रकार अमेरिका के बड़े पूँजीपतियों का व्यापार बन गया। पूँजी और पूँजीपतियों के आते ही इस उद्योग की ट्रेड यूनियनें बनने लगीं, जन-सम्पर्क विभाग खुलने लगे और इस व्यवसाय पर लगे कलंक के टीके को धोया जाने लगा। कानूनी तौर पर दुनिया के प्राय: सब सभ्य देशों में वेश्यावृत्ति पर पाबन्दी है, लेकिन अकेले अमेरिका में इस उद्योग से सम्बद्ध ट्रेड-यूनियनों के सदस्यों की संख्या आठ-नौ हज़ार है। अभिभावकों के एक संघ, अमेरिका की नागरिक अधिकार समिति, कैलीफोर्निया बार ऐसोसियेशन दण्ड संहिता से सम्बद्ध राष्ट्रीय कमीशन आदि ने इस उद्योग पर लगी कानूनी पाबन्दियों को हटाने के लिए आन्दोलन छेड़ रखा है।"

अब देखिए, किस प्रकार नारी को विषय-गुड़िया के रूप में व्यापारिक वस्तु मान कर यह 'उद्योग' हो रहा है! फिर कैसी-कैसी संस्थाएँ इस व्यापार को खुले आम करने की छूट पाने के लिए कोशिश कर रहीं हैं। है कोई अन्त मनुष्य की वेश्यावृत्ति का? उक्त समाचार पत्र के सम्पादक ने इसी लेख में बताया है कि यह हवा हिन्दुस्तान में भी आ चुकी है और इस "आँधी के झौंके समाज को झकझोरने और तोड़ने लगे हैं।"

व्यापारिक विज्ञापनों में नारी-शरीर पर प्रदर्शन

मनुष्य ने नारी के तन को बेचने और खरीदने का धन्धा ही नहीं किया बल्कि अपने व्यापार को आगे बढ़ाने वाले विज्ञापनों में, सिनेमा की फिल्म के प्रति आकर्षित करने के लिए तथा पत्रों-पत्रिकाओं की बिक्री बढ़ाने के लिए उनके मुख्य-पृष्ठों पर या अन्य किसी पृष्ठ पर भी नारी के शरीर को नग्न या अर्द्ध-नग्न अवस्था में चित्रित करने का कुत्सित कर्म किया है। दिनों दिन यह रिवाज़ बहुत ही ज़ोर पकड़ चुका है। आप किसी भी बुक-स्टाल (Book Stall) पर जाकर देखें तो वहाँ आपको ऐसे टाइटलों की भरमार मिलेगी। किसी भी व्यापारिक वस्तु के इश्तहार को देखें तो उसमें नारी के शरीर का किसी-न-किसी तरह प्रदर्शन मिलेगा।

इसके अतिरिक्त आप देखेंगे कि आज कितने ही अश्लील पत्र और पत्रिकायें छपती हैं जो युवकों के मन को वासना-भोग के लिए उत्तेजित करके समाज को एकदम पतित बना रहे हैं। एक प्रकार से ऐसे पत्रों-पत्रिकाओं की बाढ़-सी आई हुई है।

फिर, बचपन से 'सेक्स एज्युकेशन' (Sex-education) के नाम से भी जो कुछ किया जा रहा है, उससे भी स्थिति बिगड़ ही रही है।

परिवार नियोजन के कृत्रिम साधन

एक बात और भी है। आज मनुष्य की कामुकता के कारण जनसंख्या में जो भयावह वृद्धि हो रही है, उसकी रोकथाम के लिए जो कृत्रिम साधन बनाये गये हैं उनसे भी बड़ी हानि हो रही है। पुरुष ने नारी को यह साधन देकर अथवा स्वयं इनका प्रयोग करके वासना-भोग को सीमातीत बना दिया है। अब तो इन साधनों

ने नारी को वेश्यावृत्ति की ओर धकेलने का साधन ढूँढ लिया है। आखिर क्या होगा इस कामाग्नि से जलने वाली दुनिया का!

गुप्त रोगों से बुरा हाल

वासना के मारे मनुष्य ने अपना बुरा हाल कर लिया है। एक समाचार पत्र[5] में बताया गया था कि अमेरिका में यद्यपि सैक्स एज्युकेशन दी जाती है, इलाज की भी पूरी व्यवस्था है तथापि हर वर्ष कई लाख व्यक्ति गुप्त रोगों (venereal Diseases) से पीड़ित होते हैं। अमेरिका के गुप्त रोगों के एक प्रसिद्ध डाक्टर – डॉ० इमेन्युल स्नेल (Dr. Emanul Sneel) के अनुसार – "गुप्त रोग उत्तरी अमेरिका तथा कनाडा में और सभी पाश्चात्य देशों में काबू से बाहर हो गये हैं।" इसका कारण क्या है? यही तो कि वह 'स्वच्छन्द समाज' (Permissive Society) है, जहाँ मनुष्य के अनेक वासनात्मक सम्बन्ध हैं? वहाँ इलाज कराने के बाद फिर लोग इन गुप्त रोगों से पीड़ित हो जाते हैं क्योंकि वह सम्भोग से बाज़ नहीं आते–ऐसा उपरोक्त लेख में बताया गया है। अत: जब देह-अभिमान पर आधारित मानवी दृष्टि से समाज की ऐसी दुर्दशा हो गई है, तो क्या तब भी यह आशा नहीं की जा सकती कि वर्तमान पीढ़ी अपने हित की बात को सुनेगी और श्रेष्ठता की राह पर कदम रखने को तैयार होगी? क्या मनुष्य 'काम' महाशत्रु से इतना परास्त हो चुका है कि अब उसमें उठने की हिम्मत भी नहीं? वह इतना अंधा हो चुका है कि उसे अपनी भलाई का रास्ता भी दिखाई नहीं देता? नारी की मुक्ति की बात को छोड़िए, हम तो चाहते हैं कि पुरुष स्वयं इस सड़ान्द से मुक्त हो। यदि अब भी मनुष्य ने इस ओर ध्यान न दिया तो इस पाप के भरे घड़े के साथ वह भी डूब जायेगा। यदि वह ईश्वरीय ज्ञान और योग से स्वयं को पवित्र करने, अपने नयनों को अध्यात्म जल से धोने का प्रयत्न करेगा तो बचाव की उम्मीद हो सकती है वरना तो 'नारी मुक्ति' या नारी कल्याण का नारा थोथा ही सिद्ध होगा और पुरुष, पशु-वृत्ति से सभ्यता को विनाश की अग्नि में धकेलेगा।

---

5. Scourage of V.D. : Times of India, 27 May, 1975.

वृत्ति और दृष्टि के पतन से वेश्या-वृत्ति में वृद्धि और जन-जन का चारित्रिक सर्वनाश

वर्तमान युग भौतिकवादिता का युग है। अब नैतिक मूल्य ढ़हते जा रहे हैं। संयम-नियम की चर्चा ही कोई विरला करता और सुनता है। आज तो इस बात का प्रचार किया जाता है कि 'वासना' मनुष्य की शारीरिक भूख है; मनुष्य को चाहिए कि जहाँ-कहीं और जैसे-कैसे भी हो सके, उस भूख की तृप्ति करे। पाश्चात्य समाज तो आज पूर्णत: स्वच्छन्द (permissive) समाज है ही परन्तु आज जबकि एक देश के हज़ारों पर्यटक दूसरे देशों में आते-जाते हैं और साहित्य का आयात-निर्यात भी बहुत बड़ी मात्रा में होता है, तब इस विचार की आँधी पूर्वीय देशों में भी आये बिना कैसे रुक सकती है? अत: परिणाम यह हुआ है कि आज यहाँ भी लोग ब्रह्मचर्य के पालन की बात पर मज़ाक करते हैं। प्रसिद्ध साप्ताहिक पत्र 'इल्लस्ट्रेटिड वीक्ली' में छपे एक वृहद् विशेष लेख के शब्दों में "आज किसी कन्या के जीवन में विवाह का कोई महत्त्व नहीं रहा।... बल्कि आज वह विवाह की योजना को तब तक के लिये स्थगित कर देना चाहती है जब तक कि वह पहले ही 'मनमौज' न मना ले। आज कँवारेपन को तो पुराना फैशन माना जाता है और उस पर अट्टहास किया जाता है...।"[1] आज संतति-निरोध के साधनों ने, भौतिकवाद ने तथा यौन-स्वच्छन्दता ने तो पवित्रता और कुँआरा-पन को गया-बीता बना दिया है...![2]

वेश्याओं में वृद्धि से कहीं ज्यादा वेश्या-वृत्ति में वृद्धि

कहने का भाव यह है कि आज सिनेमा, टेलीविज़न, नॉवल तथा सैक्स-लिट्रेचर ने स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध के बारे में प्राचीन रहे-सहे नैतिक मूल्यों को भी मिटा-सा दिया है। कुछ शताब्दियों पहले भी देश में वेश्याएँ तो थीं ही परन्तु

1. Today, marriage is not longer the most important thing in a girl's life....On the contary, she defers plans of marriage until she has had that "good time". Virginity is laughed at as something terribly old-fashioned....

2. Effective contraceptive devices, materialism and permissiveness have rendered virginity obsolete and chastity out-moded. With no fear of pregnancy, thanks to our fool-proof prophylaxis, women like men have a whale of a time....
– Illustrated Weekly of India, dt. 26 No., 1972.

वेश्यावृत्ति पर तो कुछ अंकुश था। किन्तु अब इस 'स्वच्छन्दता' की बाढ़ से तो वह अंकुश भी जाता रहा है। आज पेशावर वेश्याओं की संख्या से तो सैंकड़ों-हज़ारों गुणा ज्यादा संख्या गुप्त वेश्याओं की है[3] परन्तु इतना ही नहीं, दृष्टि और वृत्ति तो प्राय: हरेक मनुष्य की अपवित्र हो ही चुकी है। दूसरे शब्दों में यह मनोविकार तो सभी के मन में खेमे डाले जमा हुआ है।

इस धब्बे को धोने का यत्न

वेश्याओं के रूप में समाज के मुख पर जो धब्बा है, उसे धोने के लिए अब तक कई कानूनी और सुधारात्मक कदम तो लिये गये हैं। सन् 1956 में भारत सरकार ने वेश्यागमन को रोकने के लिये कानून भी पास किया था[4] सरकार ने इसके कार्यान्वयन (Implementation) की ज़िम्मेदारी प्रादेशिक सरकारों पर छोड़ दी और उसके लिये प्रादेशिक सरकारों को आर्थिक सहयोग दिया ताकि वे पतिता नारियों के लिये 'घर' अथवा 'संस्थान' कायम करें। परन्तु सरकार और समाज दोनों ही जानते हैं कि इससे समस्या का रंच भी हल नहीं हुआ। थोड़ा-बहुत हल तो तभी हो सकता था जब इस कानून के कार्यान्वयन के निमित्त पुलिस के एवं अन्य सरकारी अधिकारी इस बारे में पूरी दिलचस्पी लेते। परन्तु आज के वातावरण में इस विधि से तो इसका उन्मूलन सम्भव नहीं मालूम होता। यों तो कई सामाजिक संस्थाओं ने भी इसके बारे में प्रयत्न किया है। कई सम्मेलन भी हुए हैं और संगोष्ठियाँ भी हुई हैं। सन् 1972 में नई देहली में अन्तर्राष्ट्रीय वेश्यापन-परित्याग संस्थान (International Abolitionist Federation) का 25वाँ अधिवेशन हुआ था जिसमें हज़ारों प्रतिनिधियों ने भाग लिया। ऐसे अन्य भी कई सभाएँ हुईं, परन्तु इस विधि से भी स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ।

कुछ लोगों का पहले यह विचार था कि जैसे-जैसे शिक्षा फैलेगी और लोग अधिक धनवान होंगे, वैसे-वैसे वेश्यापन भी समाप्त हो जायेगा। परन्तु अब यह बात तो ग़लत प्रमाणित हो चुकी है। पाश्चात्य देशों में तो लोग प्राय: पढ़े-लिखे भी हैं और उनके पास धन भी काफी है, परन्तु फिर भी वहाँ तो वेश्यावृत्ति बहुत बढ़ी

3. The clandsetine and amateur prostitutes are increasing in all civilised countries. Delegatesto the Abolitionist Congress acknowledged the emergence of this new class of prostitutes...Illustrated Weekly of India, 26 Nov., 72.
4. Suppression of Immoral Traffic Act, 1956.

ही है। पहले यह जो मान्यता थी कि गरीबी के कारण नारी अपना शरीर बेचती है, अब यह निराधार सिद्ध हो चुकी है। यदि गरीबी ही वेश्या बनने का कारण होती तब तो सभी गरीब-नारियाँ वेश्या होतीं और यदि धन होने से वेश्यापन समाप्त होता तब तो अमीर लोगों में कोई वेश्याएँ न होतीं। परन्तु आज आँकड़े तो इससे विपरीत ही बता रहे हैं। आज यह माना जाता है कि धन के कारण इस कुमार्ग को अपनाने वाली नारियाँ तो उन नारियों की संख्या से बहुत कम हैं जो कि अपनी रुचि या मनोवृत्ति के कारण गुप्त वेश्याएँ हैं और इस बात को देखा गया है कि चाहे कोई भी कारण हो, नारी को पतिता बनाने में पुरुषों का ज्यादा हाथ है। पुरुष पैसे या तोहफों का लालच देकर, चालाकी से फुसला (Seduce) करके या झूठे प्यार का रूप रच कर उन्हें 'पतिता' बना देता है।

इसका परिणाम

गोया वेश्याओं के रूप में जो समस्या समाज के सामने है, उससे कहीं अधिक विकराल समस्या वेश्यापन की मनोवृत्ति की है। आज आम लोगों की ऐसी ही मनोवृत्ति है। आज मनुष्य बाज़ार में चलते-फिरते भी इधर-उधर देखता है अर्थात् उसकी बुद्धि भटक गई है। नारियाँ भी फैशन की होड़ में तथा देह-अभिमान के वशीभूत होकर अपनी लज्जा, संकोच और शील को छोड़ती जा रहीं हैं। स्पष्टत: इसका उन्मूलन सरकार नहीं कर सकती न उसका बनाया हुआ कानून कर सकता है। आजकल स्कूलों और कालेजों में जो शिक्षा दी जाती है, उससे भी इस स्थिति का सुधार नहीं हो सकता। बल्कि आज तो ऐसे शिक्षा के स्थानों पर – कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में भी वातावरण बिगड़ गया है। अत: इसके सुधार का तरीका अलौकिक ही है।

मनुष्य के मन की ऐसी वृत्ति का कारण तो उसका देह-अभिमान ही है। वह चर्म-चक्षुओं से नारी के चर्म रूप-रंग को देख कर, माया-मोह से आवृत्त हो जाता है। उसे शरीर में भरे न असंख्य कीटाणुओं का ख्याल रहता है न ही शरीर में के प्रतिकूल मादे (Foreign Matter) का, न शरीर की नश्वरता का ध्यान रहता न उसे घेरने वाले ज़रा, व्याधि, काल-विकराल का। वह ऐन्द्रिय चपलता के वशीभूत हुआ अपना सर्वस्व खोने

को तैयार हो जाता है। उसे यह तो भूल ही जाता है कि यह विकार तो अग्नि में घी डालने की तरह भोगने से भड़कता ही है। यह मनोवृत्ति तो मनुष्य के शरीर को क्षीण करने वाली, उसके मस्तिष्क की शक्ति को मन्द करने वाली, उसकी आत्मिक ज्योति एवं उसके मनोबल को डगमगाने वाली, उसके नैतिक पक्ष को दुर्बल बनाने वाली, उसे ज़रा, व्याधि एवं काल की ओर धकेलने वाली है। यह दूसरे के जीवन पर भी कुठाराघात है। देखने में तो यह 'प्यार' है परन्तु वास्तव में यह आत्मा को 'मार' डालने के तुल्य है। इससे न केवल अपना अकल्याण होता है बल्कि समाज का भी घोर अधोपतन होता है तथा तरह-तरह के शारीरिक और मानसिक रोग पनपते हैं। 16वीं शताब्दी में इसके कारण से यूरोप की 1/3 जनता इससे सम्बन्धित गुप्त रोगों (Venereal Diseases) से पीड़ित थी। आज भी भारत में हर वर्ष 80,000 व्यक्ति इन रोगों से ग्रसित होते हैं। देखिये तो मनुष्य किस प्रकार अपना सर्वनाश कर रहा है!

अत: अब इस मनोवृत्ति को ठीक करने का उपाय, लोगों को आध्यात्मिक शिक्षा देना ही है। जिससे वे अपने स्वमान को जानें, अपने परमपिता परमात्मा को पहचानें तथा इस मोरी-के-कीड़े जैसे जीवन को छोड़ महान् बनने का पुरुषार्थ करें। मनुष्य समाज को इस पाप-गर्त से निकालने का तरीका ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज राजयोग ही है जिनसे मनुष्य को ईश्वरीय आनन्द की अनुभूति होती है।

यह आख्यान प्रसिद्ध है कि भगवान ने पहले भी वेश्याओं और गणिकाओं का तथा अजामिलों का उद्धार किया था। अब पुन: परमपिता परमात्मा अवतिरत होकर इसके लिए प्रेरणा दे रहे हैं। क्या ही अच्छा हो कि अब नर-नारी अपने पुराने, पतित जीवन को पावन बनाने के लिये ज्ञान एवं योग के वरदान प्राप्त करें।

संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव की घोषणा

1975 में अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के सिलसिले में संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O.) के महासचिव (Secretary General) महोदय ने भी 26 पृष्ठ की एक रिपोर्ट तैयार की थी जिसमें उन्होंने बताया था कि नारियों को टेलीविज़न इत्यादि पर वस्तुओं की बिक्री बढ़ाने के लिए प्रयोग किया जा रहा है।[5] इससे मनुष्य का मन

5. "A news-report by U.N. Secretary General Kurt Waldheim takes note of complaints that 'Women are used as sex-objects to promote sales on television and suggests

विचलित होता है और नारी के प्रति पुरुष का दृष्टिकोण विकृत होता है। अत: उन्होंने सुझाव दिया था कि हरेक देश में सरकार रेडियो तथा टेलीविज़न पर कुछ समय ऐसे कार्यक्रम के लिए सुनिश्चित कर दे। जिस कार्यक्रम का उद्देश्य नारी के प्रति पुरुष का दृष्टिकोण सुधारना हो। रिपोर्ट में यह भी बताया गया था कि कई देशों में तो स्पष्ट रूप से नारी के शरीर के अभद्र-प्रदर्शन से पुरुष को विचलित करने का यत्न होता है।

अत: हमारा यह निवेदन है कि सरकार कानून के डण्डे से तो वेश्याओं के अस्तित्व को समाप्त नहीं कर सकती परन्तु कम-से-कम रेडियो तथा टेलीविज़न पर तो ऐसे कार्यक्रम आयोजित करे कि जिससे लोगों का नारी के प्रति दृष्टिकोण सुधरे।

पुनश्च, आज समाचार पत्रों में, पोस्टर्ज़ (Posters) द्वारा तथा वस्तुओं के प्रचारार्थ बोल्डों (Hoarding) पर नारी के शरीर का जो वासनोत्तेजक प्रदर्शन होता है, कम-से-कम उस पर तो सरकार प्रतिबन्ध लगाये। पत्रों-पत्रिकाओं में तथा नावलों में जिस अशिष्ट रूप में नारी के चित्र प्रयोग किये जाते हैं अथवा चल-चित्रों में नारी को 'भोग्या' मान कर जो दौड़-धूप दिखाई जाती है, उन पर तो सरकार प्रतिबन्ध लगाये। यदि सरकार इसके विषय में कोई कड़ा कानून नहीं बनाती तो निश्चय ही वह अपने कर्त्तव्य से चूकती है।

हमारा यह दृढ़ निश्चय है कि यदि सरकार ने इस विषय में कोई कार्यवाही न की तथा लोगों के दृष्टिकोण को सुधारने तथा आत्मिक बनाने में भी सहयोग न दिया तो देश का बहुत बड़ा अहित होगा।

---

compulsory reservation of air time to promote their equality with men....Dr. Waldheim prepared the 26-page report on the influence of mass media on attitudes towards women at the request of the U.N. Commission on the Status of Women...Britain, the study says, speaks of a tendency to use the female anatomy in attempts to sell merchandise with which it has no connection...There are countless television films in which women play the stereotyped roles of seducters or nagging wife: 'Fair Sex at Sales Counter'. (The Premier, dt. the 4th Feb., 1974).

विवाह-रहित और बेबी-रहित वर्ष

इतिहास इस बात का साक्षी है कि पिछले दो-ढाई हज़ार वर्षों से पुरुष, नारी को 'वासना की गुड़िया' अथवा अपनी एक सम्पत्ति मान कर उसे भोगता चला आया है। वह वासना (Sex) को ही 'प्यार' (Love) मानता चला आया है। इसके परिणामस्वरूप 'काम' से क्रोध और मोह तथा लोभादि की उत्पत्ति होती चली आई है। इन सबका ही यह नतीजा है कि दिनोंदिन जनसंख्या बड़ी तीव्र गति से बढ़ती आई है और उसके कारण से निर्धनता, शोषण, सम्पत्ति के लिये झगड़े और अपराध इत्यादि पनपते चले आये हैं। परिणामत: यह संसार नरक बन गया है।

आज जनसंख्या बहुत तीव्र गति से बढ़ रही है और सरकारों के सामने विराट अन्न समस्या, रोज़गार समस्या, अपराध-समस्या (Law Order Problem) तथा अनेकानेक आर्थिक, नैतिक और सामाजिक समस्याएँ उपस्थित कर रही है। सन्तति निरोध के कृत्रिम साधनों को अपनाने से अविकसित देशों में सन्तति-निरोध में कोई विशेष सफलता तो हुई नहीं बल्कि व्यभिचार और दुराचार बढ़ा ही है।

सविनय कल्याणकारी सुझाव

अत: हमारा सुझाव है कि पिछले दो-ढाई हज़ार वर्षों से पुरुष, नारी के प्रति जो वासनात्मक दृष्टिकोण से व्यवहार करता आया है, अब उस दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने के लिए अर्थात् 'काम' विकार एवं दैहिक प्रेम के स्थान पर शुद्ध स्नेह स्थापित करने के लिए दो वर्षों तक विवाह बन्द हों। दो वर्ष की अवधि कोई बहुत लम्बी अवधि नहीं है; इसे गुज़रते पता ही नहीं लगता। इससे व्यक्ति और देश को अनगिनत लाभ होंगे। एक तो मनुष्य दैहिक-पँच भौतिक आकर्षण का गुलाम होकर, जो नकेल के बिना, स्त्री-देह पर अपना जीवन-तत्व लुटाता रहा है, उस गुलामी से, जरा, व्याधि और मृत्यु की ओर ले जाने वाले उस पतनकारी विकर्म से बचेगा। इससे उसका स्वास्थ्य अच्छा होगा, शरीर सबल होगा, उसमें उत्साह और उल्लास बढ़ेगा, कार्य-क्षमता में वृद्धि होगी, एकाग्रता सहज होगी और निश्चय ही उसका नैतिक विकास होगा। इस एक गुण से हज़ार और गुण भी आयेंगे। विशेष बात यह है कि उसमें पवित्र मनसा पर आधारित शुद्ध प्यार का

अभ्युदय होगा जो जीवन में झगड़ों को और तनाव को समाप्त कर शान्ति और खुशी लाने वाली चीज़ है।

इसके अतिरिक्त; देश तथा विश्व को तो अतुल लाभ होगा ही। आज हमारे देश में हर दिन लगभग 72 हज़ार बच्चे पैदा हो रहे हैं। इससे समाज पर असह्य आर्थिक, शैक्षणिक एवं सामाजिक बोझ पड़ रहा है और एक घुटन-सी हो रही है। दो वर्ष 'विवाह-रहित' (Marriage Free) मनाने से कम-से-कम और भयावह वृद्धि तो कम होगी। यह समाज की, राष्ट्र की, विश्व की बहुत बड़ी सेवा है, मनुष्य-जाति से बहुत बड़ा सहयोग है क्योंकि यदि अब भी नियन्त्रण न हुआ तो समूची मनुष्य-जाति के संरक्षण की भीषण समस्या सामने है।

बाल-रहित वर्ष

उपरोक्त कदम लेने के अतिरिक्त, यह भी कहना होगा कि जो पहले ही से विवाहित हैं, वे भी दो वर्ष ब्रह्मचर्य का पालन करें। इन दो वर्षों को वे इस व्रत में ही गुज़ारें। वे इन दो वर्षों को 'बेबी-रहित' (No Baby Years) वर्षों के रूप में मनायें।

वैसे भी जब डाक्टर किसी व्यक्ति को कोई राय देते हैं तो वह अपने स्वास्थ्य-हित के लिए उसका पालन करता ही है। देश में जब आपतकालीन स्थिति (Emergency) की घोषणा होती है, तब भी तो लोग राष्ट्र के सर्वोच्च अधिकारी द्वारा दिये गये अध्यादेश का पूर्णत: पालन करते ही हैं। देश पर बने संकट के समय हर अच्छा नागरिक देश के हित के लिये कुर्बानियाँ करता ही है। इसी प्रकार, अपने तथा समाज के यह परम हित में है कि दो वर्ष तो 'बाल-जन्म-रहित' रूप में मनाये जायें।

इस थोड़े से अंकुश अथवा विराम से यह भी होगा कि मनुष्य नारी को बच्चे जनने की मशीन मान कर जो उससे काम लेता आया है, उसमें वांछित परिवर्तन होगा और दोनों का एरस्पर जीवन-साथी के रूप में परमार्थ-पथ पर स्नेह बढ़ेगा तथा अब तक की सन्तति पर भी भला प्रभाव पड़ेगा। यह सारा वातावरण जो 'काम' के आघातों से विषाक्त हो चुका है, इसकी अशुद्धि में थमाव आयेगा।

पुनश्च, नारी को बच्चे जनने में व्यस्त करके उसके जीवन के आदर्शों को मलियामेट करने तथा उसकी सभी परमार्थिक इच्छाओं एवं पुरुषार्थ को भस्मसात् करने का जो जघन्य कर्म मनुष्य अनजाने से करता आया है, उसका भी यह प्रायश्चित होगा। इससे महिलाओं को कुछ तो फुर्सत की सांस मिलेगी और वे अपनी उन्नति के लिए भी पुरुषार्थ कर सकेंगी।

सन् 1974 में 'नेशनल काउन्सिल आफ विमेन इन इण्डिया' (National Council of Women in India) ने सन् 1975 को नये जन्म रहित वर्ष (No baby year) मनाने की घोषणा की थी परन्तु उन्होंने इसके लिए जन-साधारण की कोई ऐसी मार्ग-प्रदर्शना तो की ही नहीं कि जिससे वे ब्रह्मचर्य का पालन करके इस लक्ष्य की पूर्ति कर सकें।

इसी प्रकार, आचार्य विनोबा भावे[1] ने यह सुझाव दिया था कि किसी भी घर में जो लड़के हों, उनमें से केवल आधे ही विवाह करें, बाकी अविवाहित रहें। परन्तु यह तो अव्यवहारिक बात है। किसी उच्च आध्यात्मिक लक्ष्य तथा उसके लिये सहज मार्ग तथा उसके लिये कोई मार्ग-प्रदर्शना पाये बिना कोई लड़का भला सारी आयु विवाह के बिना कैसे रह सकता है? पुनश्च, चार लड़कों में से कौन-से दो विवाह करें और कौन-से अविवाहित रहें – यह कैसे निर्णय हो और कौन किसको इसके लिए उद्यत करे? यदि तीन लड़के हों तब तीन का आधा कितना होता है? यह तो बखेरे की बातें हैं।

सबसे श्रेष्ठ तो यही है कि दो वर्ष – 2001 और सन् 2002 'विवाह-रहित वर्ष' मनाये जायें तथा इन दो वर्षों में विवाहित लोग भी ब्रह्मचर्य का पालन करें। समाचार पत्रों में भी यह समाचार छपा था कि विश्व के जनसंख्या विशेषज्ञों ने एक वर्ष (हम कहते हैं दो वर्ष) 'बच्चे न पैदा करने' के वर्ष (No baby year) के रूप में मनाने की बात की सराहना की है[2] और कहा है कि भारत देश ही इसके कार्यान्वयन के लिए सर्वश्रेष्ठ भूमि है।

पुनश्च, संसद में कन्याओं के विवाह की आयु के बारे में कानून बन चुका है परन्तु हमारा यह सुझाव है कि कन्याओं को यह भी कानूनी अधिकार हो कि उनके माता-पिता

1. इण्डियन एक्सप्रेस, 20 मई, 1975 (अहमदाबाद सस्करण) ।
2. इण्डियन एक्सप्रैस, नई देहली संस्करण, 8 जून 1975 ।

उन्हें विवाह करने के लिए बाध्य नहीं कर सकते। आखिर हरेक को अपने जीवन के लिए स्वयं ही सोचने का अधिकार है कि वह अपना जीवन कैसे बिताना चाहता व चाहती है। कन्या कोई भेड़ तो है ही नहीं कि जिसे पकड़ कर किसी चरवाहे या कसाई के हवाले कर दिया जायेगा। उसको अपना जीवन बिताने की स्वतन्त्रता है। हाँ, यह देख लिया जाय कि वह किन्हीं आदर्शों के कारण से अविवाहित रहना चाहती है, वह किसी नारी-संस्था से जुड़ी हुई है, उसे धार्मिक किंवा आध्यात्मिक साधना में रुचि है और फिर दो-तीन वर्ष की अवधि में वह कुँआरी रह कर सन्तुष्ट भी है सुरक्षित एवं चरित्रवान भी। यदि ऐसा हो तो कानून उन माता-पिता को दण्डित करे जो ज़बरदस्ती उसे ब्रह्मचर्य के जीवन से हटा कर विवाह करने के लिए मजबूर करते हैं। यदि कोई कन्या परिवार-नियोजन के उद्देश्य को लेकर, किसी सामाजिक कार्य करने में रुचि के कारण से अथवा अपनी अन्तरात्मा की शुद्ध आवाज़ के कारण कुँआरी रहना चाहती है अथवा कोई विवाहिता स्त्री सम्भोग से हट कर निस्संतान रहना चाहती है तो उसे विवाह या सन्तानोत्पत्ति के लिए बाध्य करने वाला व्यक्ति दण्डित होना चाहिए। विनोबा जी ने तो यह कहा है कि कुटुम्ब के आधे लड़के विवाह न करें, परन्तु लड़कियों को भी तो यह अधिकार होना चाहिए कि वे चाहें तो अविवाहिता रहें – ब्रह्मचर्य का पालन करें और विवाहित माताओं को भी तो यह अधिकार होना चाहिए कि वे भी उपरोक्त कारणों से ब्रह्मचर्य का पालन करें।

नारी अबला है या सबला ?

बहुत पुराने ज़माने से पुरुष यह कहता चला आ रहा है कि नारी शारीरिक तौर पर 'दुर्बल' अथवा 'अबला' (Weak sex) होती है। यह भी कहा जाता रहा है कि 'नारी की बुद्धि उसके बायें पांव की एड़ी में होती है' अर्थात् उसमें सोचने, समझने और निर्णय करने की शक्ति नहीं होती। अब तक शिक्षित लोगों में भी यह विश्वास चला आ रहा है कि बौद्धिक विकास (Intelligence) के दृष्टिकोण से भी नारी पुरुष के समतल पर नहीं उतरती। नारी के विरुद्ध यह भी एक आरोप लगाया जाता रहा है कि वह पुरुष की अपेक्षा अधिक भावुक (Emotional) तथा वासना-प्रधान (Sexy) होती है। परन्तु आधुनिक शरीर-विज्ञान (Biology) और मनोविज्ञान (Psychology) द्वारा तथा प्रत्यक्ष उदाहरणों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि नारी के विषय में हज़ारों वर्षों से चली आ रही उपरोक्त चारों प्रकार की (शारीरिक, बौद्धिक, भावात्मक तथा चारित्रिक) मान्यताएँ निराधार हैं और सरासर ग़लत हैं।

प्रत्यक्ष उदाहरण

पुरुष प्राय: यह कहते सुने जाते हैं – "देखो तो ज्ञान में, विज्ञान में, कला में, राजनीति में, शासन कार्य इत्यादि में जैसे प्रतिभाशाली पुरुष हुए हैं, वैसी नारियाँ कहाँ हुई हैं? नारियों में न तो ल्योनार्डो (Leonardo) और माईकलएंजियलो (Michelangelo) जैसे कलाकार हुए हैं न शैक्स्पियर, कालीदास एवं रविन्द्र नाथ टैगोर जैसे कवि और नाटककार, न गेलिलियो (Galileo), कान्त (Kant) कपिल मुनि, शंकराचार्य इत्यादि जैसे दार्शनिक और न न्यूटन तथा आईन्स्टीन इत्यादि जैसे वैज्ञानिक ही हुए हैं। यदि कुछेक नारियों ने इन क्षेत्रों में प्रतिष्ठा पाई भी होती हो तो भी वे इतनी उच्च कोटि की नहीं हुई जैसे कि पुरुषों ने अपनी असाधारण प्रतिभा दिखाई है।

परन्तु इस प्रकार की बात कहने वाले पुरुष प्राय: भूल जाते हैं कि वैज्ञानिकों में नोबल पुरस्कार विजेता मैडम क्यूरी (Mme Curie)[1] को जो स्थान प्राप्त है, वह भी किसी प्रकार से पुरुषों के काम से कम महत्त्व का नहीं है। इसी प्रकार,

1. इसने रेडियम (Radium) को पहली बार उपलब्ध किया था।

यूरेनियम-238 का पहले-पहल जिस महिला ने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आविष्कार किया– श्रीमती लाईज मीटनर (Lise Meitner) — उनका भी विज्ञान में बहुत ही उच्च स्थान है। इनके अतिरिक्त आइरीन क्यूरी-जोलिओट (Irene Curie-Joliot) का तथा शरीर-विज्ञान और चिकित्सा शास्त्र (Physiology & Medicine) में नोबल पुरस्कार विजेता गर्टी कोरी (Gerti Cori) का स्थान भी सर्वोच्च कोटि के वैज्ञानिकों में गिना जाता है। जहाँ तक साहित्यकारों की बात है, पर्ल बक (Pearl Buck), गेबरियला मिस्ट्राल (Gabriela Mistral) ग्रेजिया डेलेड्डा (Gragia Deledda), सिग्रड (Sigrid Unset), सेल्मा (Selma Lagerloof) इत्यादि महिलाओं ने भी तो साहित्य में नोबल पुरस्कार पाया है? कलाकारों में ज्योर्जिया ओ' कीफे (Georgia O' Keeffe) और मैरी (Mary Cassatt) भी महान कलाकार मानी गई हैं। संगीतकारों में मइरा हेस्स (Myra Hess) और वान्दा लेन्डोवस्का (Wanda Landowska) की संगीत कला किसी से कम नहीं है। भारत में भी लता मंगेश्कर, सुब्बालक्ष्मी इत्यादि उच्च कोटि की गायिका तथा नर्तकी मानी गई हैं। इधर दर्शन एवं अध्यात्म के क्षेत्र में जहाँ 'आदि शंकराचार्य' का नाम आता है वहाँ उससे शास्त्रार्थ करने वाली, मण्डन मिश्र की धर्म-पत्नी भारती का नाम भी नहीं भुलाया जा सकता, न ही संत कवियों में सूरदास के महत्त्व के सामने मीरा के महत्त्व को विस्मृत किया जा सकता है। शासन-कार्य में भी इंग्लैण्ड की महारानी एलिज़ाबेथ प्रथम तथा एलिज़ाबेथ द्वितीय बहुत ही जन-प्रिय एवं प्रतिभाशाली मानी गई हैं। इनके अतिरिक्त, नेदरलैंण्ड की महारानी जुलियना (Queen Juliana) और इंग्लैण्ड की महारानी विक्टोरिया की भी इतिहास पर काफी छाप पड़ी है। इधर भारत में भी पूर्व में श्रीमती इन्दिरा गाँधी, इस्राईल में श्रीमती गोल्डा मीयर (Golda Myer) तथा श्रीलंका में श्रीमती भण्डारनायके ने काफी ख्याति पाई है।

यों नारियों में सैंकड़ों-हज़ारों और भी सर्वोच्च कोटि के दार्शनिक, कलाकार, संगीतज्ञ, लेखक, वैज्ञानिक इत्यादि होते परन्तु कठिनाई यह है कि पुरुष की नारी जाति के प्रति बहुत पुराने ज़माने से यह जो भ्रान्ति रही है कि नारी का मस्तिष्क पुरुष से घटिया दर्जे का होता है और कि उसका कार्य-क्षेत्र घर की चारदीवारी ही

है, उस भ्रान्त मन्तव्य का शिकार बना कर, पुरुष ने नारी को घर के बाहर के कार्य-क्षेत्रों में कार्य का अवसर ही नहीं दिया। नारी को तो बाहर के कामों में पहली बार 'प्रथम विश्व युद्ध' के दौरान ही कार्य करने का अवसर प्रदान किया गया जबकि लड़ाई के रूप में मानवकृत आपदा आ पड़ने पर उन्हें छोटे-मोटे कार्य, जैसे कि बस-चालक (Driver), बस-वाहक (Conductor) का तथा कारखानों में निरीक्षकों (Supervisors) और कार्यकारी अधिकारी (Executive Officers) का तथा अन्य ऐसे कार्य करने का मौका दिया गया। अत: इन्हीं पिछले लगभग 50-60 वर्षों में ही तो नारियों को अपनी कार्यक्षमता तथा कार्यकुशलता दिखाने का अवसर मिला है और इसी छोटी-सी अवधि में आज नारी लगभग उन सभी क्षेत्रों में, जिनमें पहले पुरुष का ही एकाधिकार माना जाता था, बड़ी स्फूर्ति एवं दक्षता से कार्य कर रहीं हैं। अत: अब तक पुरुष यह जो आक्षेप नारी पर लगाते आये हैं कि नारी शारीरिक तथा बौद्धिक दृष्टि से या साहसिक तौर पर कमज़ोर है, व्यवहारिक रूप में ग़लत सिद्ध हो चुके हैं। आज हम देखते हैं कि महिलाएँ वकील, डाक्टर, प्रोफेसर, वैज्ञानिक, मजिस्ट्रेट, पुलिस अधिकारी इत्यादि के रूप में पुरुष की भाँति ही कार्य कर रही हैं। अभी कुछ वर्ष पूर्व ही जापान की महिला ने संसार के सबसे ऊंचे पर्वत-शिखर – माउण्ट एवरेस्ट पर पहुँच कर यह सिद्ध कर दिया है कि साहस और सहनशीलता में और कठिनाइयों और विषम परिस्थितियों का सामना करने में भी नारियाँ, पुरुषों की अपेक्षा दुर्बल नहीं हैं। महिलाओं ने अन्तरिक्ष यात्रियों के तौर पर चाँद पर जाकर तथा बौद्धिक कुशलता-सम्बन्धी कार्यों में भी भाग लेकर सिद्ध कर दिया है कि वे पुरुष से किसी भी तरह हीन नहीं हैं। अभी-अभी भी देहली में हायर सेकेण्डरी की परीक्षाओं में बालिकाएँ कई विषयों में बालकों से आगे रहीं हैं।

शरीर-विज्ञान के आधार पर नर और नारी में अन्तर

क्या स्त्री 'अबला' है या 'सबला' अथवा क्या वह शरीर-संरचना के दृष्टिकोण से पुरुष से किसी प्रकार हीन है या उसके समकक्ष है अथवा उससे उच्च है, इस बात का निर्णय करने के लिए पहले हमें यह जान लेना चाहिए कि दोनों की शरीर-रचना के मूल में क्या अन्तर है? यह बात तो लोक-प्रसिद्ध है कि माता के गर्भ में पुरुष के शुक्र कोष

(Sperm) और स्त्री के अण्ड कोष (Ovum) के सायुज्यन (Fusion) से ही शिशु का जन्म होता है। अब शरीर-विज्ञान (Physiology) ने यह भी स्पष्ट किया है कि पुरुष के शुक्र कोष और स्त्री के अण्डकोष में कुछ धागे जैसे छोटे-छोटे कण होते हैं जिन्हें 'वंश-सूत्र' (Chromosomes) कहा जाता है ।इन्हीं द्वारा यह निर्धारित होता है कि लड़का पैदा होगा या लड़की। यह देखा गया है कि एक ही वंश-सूत्र के भेद से लिंग-भेद हो जाता है। इसके सिवा और कोई अन्तर नहीं होता, यहाँ तक कि भ्रूण (Embryo) के विकास के पहले छः सप्ताह तक तो शरीर न पुल्लिग (Male) होता है न स्त्रीलिंग (Female)। उसके बाद भी बहुत ही हल्की मात्रा में अन्तर दिखने लगता है परन्तु तब भी वे कुछ अवधि तक मानो कि लिंग-भेद-रहित (Natural) ही होते हैं क्योंकि उस अवस्था में भी भ्रूण में लिंग-परिवर्तन किया जा सकता है। बाद में ही बालक या बालिका के रूप में चिह्न प्रकट होने लगते हैं और वह भी इसी आधार पर कि यदि 'वंश-सूत्र', जिनका सायुज्यन (Fusion) हुआ है, वे X X हों तो शरीर स्त्रीलिंग होगा और यदि X Y हों तो शरीर पुल्लिग होगा। बस, केवल एक 'वंश-सूत्र' का ही अन्तर होता है।

'x' वंश-सूत्र की विशेषता

अब इस विषय में जानने के योग्य बात यह है कि हर स्त्री और हर पुरुष के जीव-कोष (Body-Cell) में 46-46 वंश-सूत्र (Chromosomes) होते हैं। इनमें से 44-44 'वंश-सूत्र' तो स्त्री और पुरुष में एक-जैसे होते हैं। इन्हें 'आटोसोम' (Autosomes) कहा जाता है। दूसरे शब्दों में पुरुष के शरीर के हरेक जीव-कोष (Cell) में 44 (22 जोड़ी) आटोसोम होते हैं और ऐसे ही 44 (22 जोड़ी) आटोसोम स्त्री के हर जीव-कोष में होते हैं। परन्तु नारी के हर जीव-कोष में बाकी के दोनों 'वंश-सूत्र' विशेष प्रकार के होते हैं जिन्हें कि `xx' नाम दिया जाता है। ऐसे ही पुरुष के भी हरेक जीव-कोष में दो विशेष वंश-सूत्र होते हैं जिन्हें `xy' की संज्ञा दी जाती है। गोया दोनों के शरीर के हरेक जीव-कोष में 22 जोड़ी आटोसोम तो समान रूप से होते हैं, बाकी के दो विशेष 'वंश-सूत्रों' (Chromosomes) में से भी एक x तो दोनों में होता ही है, अन्तर केवल यह होता है कि स्त्री के हर जीव-कोष में एक x और पुरुष के हर जीव-कोष में एक y प्रकार का वंश-सूत्र ही दोनों में स्त्रीलिंग और पुल्लिग का भेद

पैदा करता है। अब देखना यह होगा कि यह 'x' वंश-सूत्र अधिक प्रबल होता है या 'Y' ? इसी प्रश्न को हल करने से मालूम हो जायेगा कि स्त्री अबला है या सबला?

इस प्रश्न के उत्तर को समझने के लिये यह जानना ज़रूरी है कि नर और नारी के हर जीव-कोष में तो 46 वंश-सूत्र होते हैं परन्तु पुरुष के शुक्र (Sperm) और नारी के अण्ड (Ovum) में वंश-सूत्र 46-46 नहीं होते बल्कि 23-23 होते हैं। पुरुष के शुक्र के जीव-कोष में 23 और स्त्री के अण्डकोष में 23 वंश-सूत्र परस्पर सायुज्यन (Fusion) से युक्ता (Zygote) बनाते हैं जो ही भ्रूण (Embryo) का रूप लेता है। पुरुष के शुक्र-कोष के 23 वंश-सूत्रों (Chromosomes) में से भी 22 'आटोसोम' (Autosomes) ही होते हैं; ऐसे ही स्त्री के अण्डकोष में भी 22 तो आटोसोम ही होते हैं परन्तु स्त्री में 23वाँ वंश-सूत्र सदा XX ही होता है। और पुरुष में 23वाँ वंश-सूत्र सदा xy ही होता है। अब यदि शुक्र कोष और अण्ड के मिलने पर पुरुष के XY में से स्त्री के अण्ड को 'y' निषिक्त (Fertilize) करता है तो बालक उत्पन्न होता है और यदि 'x' निषिक्त करता है तो लड़की पैदा होती है। परिणामत: फिर लड़की के हर जीव-कोष में एक 'x x' वंश-सूत्र और लड़के के हर जीव-कोष में एक x y वंश-सूत्र होता है।

अब जीव-शास्त्रियों ने जो छानबीन की है, उसके आधार पर वे कहते हैं कि स्त्री के हर जीव-कोष में जो पुरुष के हर जीव-कोष की अपेक्षा एक अधिक 'x' वंश-सूत्र है, उससे स्त्री-तन में कई ऐसी लाभदायक विशेषताएं हैं जो पुरुष के तन में नहीं हैं। उदाहरण के तौर पर उनका कथन है कि यदि जन्म के समय बालिका में पिता से विरासत में कोई रोग मिले (जैसे कि हैमोफिलिया Hemophilia), तो बालिका अथवा स्त्री तो अपनी माता से मिले 'x' वंश-सूत्र (Chromosome) के प्रभाव से उस रोग से मुक्त रहती है जबकि पुरुष मुक्त नहीं रह सकता क्योंकि उसे पिता से मिला 'y' वंश-सूत्र नहीं बचा सकता। जीव-शास्त्रियों ने 30 से भी अधिक ऐसे रोग बताये हैं जो कि पुरुषों में हो जाते हैं; नारी प्राय: उनसे सुरक्षित रहती है।[2]

2. Colour Blindness, Defective hairfollicles. Congenital Baldness, Defective tooth enamel. Depigmentation of the eyes, Congenital cleft of the iris, maldevelopment of the Sweat glands, Hemophilia, etc., etc.

पुनश्च, जीव-शास्त्र विशेषज्ञ यह भी कहते हैं कि देखने में भी 'y' वंश-सूत्र 'अर्द्ध विराम' (,) के आकार का, 'x' से छोटा, दुर्बल-सा दिखाई देता है। उनका विचार है कि 'y' वंश-सूत्र 'x' वंश-सूत्र की तुलना में कम विकसित है। इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए वे अन्य कई तर्क भी प्रस्तुत करते हैं।

इस प्रकार जीव-विज्ञान के दृष्टिकोण से तो पुल्लिग शरीर लेना गोया प्रारम्भ काल से ही स्त्रीलिंग शरीर की तुलना में कम स्तर लेना है। जीव-शास्त्रियों ने आंकड़ों से यह प्रमाणित किया है कि पैदा होने से पहले, पैदा होने के समय और पैदा होने के बाद जो मृत्यु होती हैं, उनमें पुल्लिग शरीर वालों की संख्या ही विश्व-भर में सदा अधिक होती है। केवल किन्हीं पिछड़े हुए अथवा अविकसित देशों में ही नारियों की मृत्यु अधिक संख्या में होती है, उसके कारण भी प्रजनन (Pregnancy or Delivery) सम्बन्धी होते होंगे। वरना डाक्टरी छानबीन से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि जहाँ तक रोगों का मुकाबला करने की योग्यता का सम्बन्ध है, नारी अधिक सक्षम एवं समर्थ होती है, वह पुरुष की तुलनाकृत अधिक स्वस्थ होती है और मृत्यु के जितने भी कारण रोगों के रूप में हैं, उन कारणों से उसकी मृत्यु पुरुषों से कम होती है और उसकी आयु पुरुष से लम्बी होती है।

पुनश्च, यह भी देखा गया है कि नारी पुरुष की तुलना में भूख, थकावट, सदमा इत्यादि झेलने में अधिक समर्थ होती है – यह जीव-विज्ञान विशेषज्ञों का मत है। अत: इस कथन में अतिशयोक्ति नहीं कि स्त्री 'अबला' नहीं है, वह पुरुष की तुलना में दुर्बल (Weaker Sex) नहीं है बल्कि उससे अधिक शक्ति-सम्पन्न (Stronger Sex) है।

यदि नारी पुरुष से किसी तरह दुर्बल है तो केवल माँसपेशियों अथवा पट्ठों (muscles) की दृष्टि से। वह भी इसलिये कि पुरुष को प्राय: कार्य ही ऐसे करने पड़ते हैं जिससे कि उसके पट्ठों का अधिक विकास होता है और फिर वंश-क्रम से भी अधिक मज़बूत पट्ठे मिलते हैं। वरना कार्य-शक्ति (Stamina) तो स्त्री में ही पुरुष से अधिक है।

परन्तु जहाँ पट्ठों की शक्ति पुरुष के लिए एक ओर विशेष लाभकर है, वहाँ वह उसके लिए हानिकर भी है। आधुनिक जीव-शास्त्र और मनोविज्ञान इस बात को

मानते हैं कि इस शक्ति (Muscular Power) के कारण पुरुष जल्दी-जल्दी उत्तेजित हो उठता है अत: इसमें लड़ाई-झगड़ा होने के कारण उसे हानि ही होती है। शरीर-शास्त्री कहते हैं कि यों तो डायनासौर (Dinosaurs) भी कद-बुत में अथवा डील-डौल में लम्बे-चौड़े होते थे परन्तु उनकी वही अच्छाई तो उनके विनाश का कारण बनी कि आज उनकी जाति तक भी मिट गई है। जैसे मनुष्य के पास यदि शस्त्र हों तो वे लड़ाई के लिए, जल्दी संकल्प उत्पन्न करते हैं, वैसे ही मनुष्य के पट्ठे यदि एक दृष्टिकोण से उसे सशक्त (Stronger) बनाते हैं तो दूसरी दृष्टि से मानसिक तौर पर वे उसके लिए हानिकर भी हैं क्योंकि वे उसे नीचा दिखाते हैं। फिर, आज का युग तो पट्ठों की मजबूती का नहीं, बुद्धि-बल एवं युक्ति-बल का ज़माना है; अब पट्ठों की सुदृढ़ता का इतना महत्त्व नहीं रहा।

इन सब बातों पर विचार करते हुए कहना होगा कि नारी अबला नहीं है परन्तु उसे 'अबला' कहते-कहते अथवा उसके प्रति ऐसा व्यवहार करते-करते पुरुष ने उसे 'अबला' बना दिया था और स्त्री ने भी ऐसा ही सुनते-सुनते स्वयं को 'अबला' मान लिया था, वरना शरीर-विज्ञान के दृष्टिकोण से नारी को अबला कहना ग़लत है।

सन्तानोत्पत्ति - नारी की विशेषता या दुर्बलता ?

नारी की दुर्बलता का एक कारण उसका जननी सम्बन्धी कार्य (Pregnancy and child delivery) माना जाता है। अनेकानेक लेखकों ने कहा है कि – 'नारी को नौ मास बच्चे को गर्भ में धारण करना पड़ता है, फिर उसे शिशु के पालन-पोषण का कर्त्तव्य भी करना पड़ता है। अत: स्त्री-शरीर की इस विशेष संरचना को देख कर कहना पड़ता है कि कुदरत (प्रकृति) की ओर से ही स्त्री के लिए दुर्बल होना तथा घर की चार दीवारी में रहना निश्चित है।' ऐसे विचार जो कि देखने में तो वैज्ञानिक और तथ्य-पूर्ण मालूम होते हैं परन्तु हैं नहीं। आज अनेकानेक समाजविद (Sociologists) तथा प्राच्यविद्या विशारद (Anthropologists) नारी द्वारा प्रजनन क्रिया को कष्टदायक, बाधक (Handicapping) या रुकावट नहीं मानते। उन्होंने देखा है कि आज भी आदिम जातियों (Aboriginals) में नारी राह चलते-चलते अथवा खेत में काम करते-करते थोड़ी ही देर तक रुक कर शिशु को जन्म देकर फिर ऐसे तो आगे चल पड़ती है जैसे कुछ ही न हो। इसी प्रकार, विकसित देशों में देखा गया है कि शिशु-पालन का वे स्वयं इतना नहीं करतीं जितना उनकी बच्चे संभालने वाली 'आया' करती है या शिशु-गृह (Childern Homes) करते हैं। परन्तु यह कैसी विचित्र बात है कि नारी में जो पुरुष की अपेक्षा एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है, उसकी भी सराहना करने की बजाय पुरुष ने उसे भी अपनी संकीर्णता के कारण 'नारी की दुर्बलता' का नाम देकर अथवा उसकी 'प्रगति में रुकावट' की संज्ञा देकर उस विशेष गुण को भी विशेष दोष के रूप में बताया है। प्राच्य विद्या विशारदों ने कहा है कि पुरुष ईर्ष्या-वश ही ऐसा कहता है। उन्होंने कई आदिम जातियों के रीति-रिवाज इत्यादि के बारे में खोजों के आधार पर प्रमाणित किया है कि प्राचीन काल में भी पुरुष ईर्ष्या के कारण नारी की इस विशेषता को छीनने की कोशिश करता रहा तथा स्वयं में यह विशेषता लाने के लिये शल्य-क्रिया का भी प्रयोग करता रहा। अब भी उसके मन में सुषुप्त ईर्ष्या है ; इसी कारण वह नारी के इस विशेष गुण को उसका विशेष दोष बता कर उसका शोषण करता है!

इसका एक मनोवैज्ञानिक प्रमाण, आपने पुरुष को कई बार ऐसा वाक्य कहते सुना होगा कि - 'इस विचार ने मेरे मस्तिष्क में जन्म लिया[1] अथवा मेरे मन में अमुक संकल्प उत्पन्न हुआ।[2] वह यह भी कहता है– ''मैंने इस विचार को अपने मन में अच्छी तरह पाला-पोसा[3] और इसे परिपुष्ट किया।'' उसे हम ऐसा भी कहते हुए सुनते हैं कि– 'मेरे पेट में अभी बहुत विचार हैं[4]...इस योजना को मैंने जन्म दिया[5].....मुझे अपने विचार (रूपी पुत्र) को प्रकट तो करने दो....[6] इत्यादि।' इस प्रकार के वाक्यों को लेकर कई मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि देखिये, ये पुरुष में इस सुषुप्त इच्छा के प्रतीक हैं कि उस में भी नारी के समान जन्म देने तथा पालन-पोषण करने की विशेष-योग्यता हो, परन्तु चूँकि शारीरिक दृष्टिकोण से तो वह उस में है ही नहीं, इसलिए वह बौद्धिक अथवा मानसिक रूप से इसकी अभिव्यक्ति करता है। अत: यह कहने में भ्राँति या अतिशयोक्ति नहीं होगी कि पुरुष अपने अन्तर्मन में तो इस विशेषता को नारी का गुण ही मानता है परन्तु प्रकट भाव में वह इसे नारी की दुर्बलता मानता है। हाँ, जन्म देने की क्रिया भी एक सतोगुणी, एक रजोगुणी और एक तमोगुणी अथवा आसुरी होती है, सतयुग में जनन योगबल से होता है; द्वापर युग से लेकर काम-भोग से प्रजनन शुरू हुआ, परन्तु तब रजोगुण था, सन्तति कम होती थी जिस से नारी को कुछ स्वतन्त्रता थी, परन्तु धीरे-धीरे नारी को वासना की गुड़िया मान लिया गया और नारी दुर्बल बना दी गयी।

यदि हम पुरुषों का यह विचार मान लेते हैं कि नारी की दुर्बलताओं तथा सभी बन्धनों का मूल कारण उसकी मातृशक्ति, उसका जननी होना इत्यादि है (यद्यपि यह बात आजकल के तमोगुणी ही प्रजनन पर लागू होती है।), तो हमारा यह जोरदार निवेदन है कि पुरुष सन्तानोत्पत्ति के कर्म पर यदि पूर्णत: काबू नहीं पा सकते तो वे नारी से बच्चे जनने की मशीन (Incubator) का काम लेकर उसका समय एवं यौवन, उसकी शक्ति एवं क्षमताएँ इत्यादि नष्ट क्यों करते हैं और फिर अपनी वासना-पूर्त्ति कर के 'यह नारी की दुर्बलता है'– उसी पर यह आरोप क्यों लगाते हैं? यदि पुरुष नारी का शोषण नहीं करना चाहता तो उसे चाहिये कि वह

1. This idea is a child of my brain.
2. This though was born in my mind.
3. I nursed this idea.
4. I am pregnant with ideas.
5. I gave birth to this plan
6. Let me be delivered of this great idea.

नारी पर 'काम' का कुठाराघात न करे ; वह उसे पैसे, बनाव-शृंगार के साधन तथा आजीविका एवं अपवित्र प्यार का झाँसा देकर, उसे शारीरिक एवं मानसिक रूप में अपने वश में कर लेता है और फिर उस गऊ का रक्तपात कर के कहता है कि -यह नारी की दुर्बलता है! यह तो दु:ख देकर, साथ ही अपमान करना है ---This is adding insult to injury! यदि पुरुष में नारी को वश करने, उसे अपने अधीन रखने, उससे अपनी वासना को भोगने का भाव नहीं है, तो हम उनसे निवेदन करते हैं कि वे कम-से-कम दो वर्ष तो नारी को अपनी भोग - कला से मुक्त छोड़ें ताकि उसे भी कुछ अवकाश मिले, जीवन में किसी उच्च लक्ष्य को साधने के लिए अवसर मिले और किन्हीं अच्छे कार्यों के लिये मुक्ति मिले। क्या अब पुरुष काम-वासना को छोड़ शुद्ध प्यार, जैसे कि दो दिव्य गुण सम्पन्न आत्मद्रष्टा महात्माओं में होता है, दे सकेगा? तब तो नारी की अवश्य ही मुक्ति हो जायेगी। वरना न तो वह इस संसार में रहते हुए पाप-मुक्त एवं बन्धन मुक्त होगी न ही देह-त्याग के बाद ही आत्मिक मुक्ति प्राप्त करेगी! चलो दया के नाम पर ही सही, यदि पुरुष नारी को वासना-भोग से मुक्त कर दे तो इतिहास उसके इस 'परोपकार' (और अपने भी कल्याण कार्य)का आभारी रहेगा। यदि पुरुष ने इस ओर कदम न बढ़ाया तो 'समाज कल्याण' (Social Welfare) के सभी कार्य क्षणिक एवं तनिक लाभ देने वाले ही सिद्ध होंगे!

क्या नारी कमाती नहीं है

आज कई लोग यह कहते हैं कि नारी अपनी आजीविका के लिये पुरुष पर निर्भर है। वह कोई ऐसा कार्य नहीं करती जिससे उसे कुछ आमदनी हो। परन्तु वास्तव में नारी घर में रसोइये का, सजावट (Interior decoration) का, सामान की खरीदारी का, अतिथि सत्कार का, रफ्फूगर अथवा छोटे दर्जी का, कुछ धुलाई और इस्त्री करने (Ironing) का, कुछ हलवाई का (मिठाई या स्वादिष्ट व्यञ्जन बनाने का), कुछ सफाई (Sweeping and cleaning), झाड़ाफूँकी का, एक मनोविश्लेषक (Psychiatrist) की न्यायीं पुरुष के दफ्तर, दोस्तों और परिस्थितियों से परेशानी का समाचार सुन कर उसे सहलाने (Comforting), परामर्श देने

(Consulation) इत्यादि का, एक सच्चे मित्र (Company) एवं घर के संयोजक (Family Manager) का, बच्चों को नहलाने-धुलाने, खिलाने-पिलाने, उनकी देख-रेख करने (Baby-sitting and child rearing) का, नर्सरी अथवा किंडरगार्टन की एक अध्यापिका का-सा, पड़ोसियों तथा कुटुम्बियों से एक जन सम्पर्क (Public Relation) कार्य-कर्त्ता की तरह का तथा ऐसे बीसियों - सैंकड़ों कार्य करती है क्या उनका कोई मूल्य नहीं? होटल के एक बैरे (Bearer) के भी सेवा-खर्च (Servicing charges) होते हैं, पंसारी के पास पुड़िया बाँधने वाले एक लड़के का भी वेतन होता है और नारी तो अपने घर से दहेज भी लाती है (!) तथा सारी आयु नित्य 24 घण्टे की 'जी हजूरी' करती है, तो भी कहा जाता है कि वह कमाती नहीं है! क्या इस से बढ़ कर समाज की और अधिक क्रूरता हो सकती है? कम-से-कम इस महिला सशक्तिकरण वर्ष से लेकर पुरुष को यह कहना बन्द करना चाहिये कि नारी अपने भरण-पोषण के लिए पुरुष पर निर्भर करती है। बचत भी आमदनी है (Saving is earning) और हर तरह के कार्य को आर्थिक मूल्य में आँका जा सकता है–उस दृष्टि से नारी पुरुष से किसी प्रकार भी कम नहीं कमाती। या तो पुरुष उसे अपनी गुलामी से ही छोड़ दे और या फिर कम-से-कम ऐसे अन्याय पूर्ण वाक्य तथा व्यवहार का अन्त करके नारी को गृह-लक्ष्मी मानता हुआ उसका उचित सम्मान किया करे!

मनोवैज्ञानिक एवं बौद्धिक योग्यता के दृष्टिकोण से नारी पुरुष से आगे है

लगभग पिछले दो सौ वर्षों से यह कहा जाता रहा है कि – "नारी का मस्तिष्क पुरुष के मस्तिष्क से माप-तोल में कम होता है, इसीलिए नारी में बौद्धिक क्षमता कम होती है।" वैज्ञानिकों ने जो परीक्षण किये, उनसे उन्हें मालूम हुआ कि यदि एक यूरोपवासी पुरुष का मस्तिष्क तौल में 3 पाउण्ड (pound) हो तो नारी का मस्तिष्क उससे 4 औंस (Ounce) कम होता है। इस अन्तर को लेकर ढोल पीटा जाता था कि नारी एक कम बुद्धि वाला जीव है। परन्तु एक समय आया और हैवलोक (Havelock Ellis)[1] और एमरम (Amram Scheinfeld)[2] ने अपने तजर्बों से सिद्ध किया कि नारी कम बुद्धि का जीव नहीं है। उसके बाद अन्य बहुत-से शरीर-विज्ञान विशेषज्ञों ने परीक्षण किये और वे भी इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मस्तिष्क के माप-तौल का बुद्धि की योग्यता या प्रखरता से कोई सम्बन्ध नहीं है। देखा गया कि अभी तक मनुष्य का जो सबसे बड़ा मस्तिष्क उपलब्ध हो सका था वह एक मूर्ख (Idiot) का था और जो सबसे छोटा मस्तिष्क उपलब्ध हुआ था, वह एक विख्यात फ्रांसिसी (French) लेखक का था।[3] मूर्ख का मस्तिष्क तौल में 2850 ग्राम से कुछ अधिक था जबकि उक्त फ्रांसिसी लेखक के मस्तिष्क का तोल कुल 1100 ग्राम था। स्पष्ट है कि मनुष्य जाति में जो मस्तिष्क (Brain) के माप-तौल में अन्तर होता है, उससे यह निष्कर्ष लेना कि छोटे मस्तिष्क वाले लोग कम बुद्धि वाले होते हैं, ग़लत है। हम संसार में यह भी देखते हैं कि हाथी, व्हेल मछली (Whale) इत्यादि का मस्तिष्क बड़ा भी होता है और भारी भी परन्तु फिर भी हम यह कदापि नहीं कह सकते कि वे मनुष्य से अधिक बुद्धिवान होते हैं।

पुनश्च, समझने की एक बात यह भी है कि मनुष्य की बुद्धि की प्रतिभा अथवा प्रखरता तो खोपड़ी की लम्बाई-चौड़ाई पर नहीं बल्कि उसमें के भूरे रंग के पदार्थ (Grey Matter) पर निर्भर करती है और यह ज़रूरी नहीं कि यदि खोपड़ी बड़ी

1. इन्होंने एक पुस्तक लिखी है जिसका शीर्षक है - Man and Woman.
2. इनकी पुस्तक का शीर्षक है - Women and Men.
3. इनका नाम था Anatole France.

हो तो उसमें वह भूरे रंग का मस्तिष्क-तत्व भी अधिक होगा। इसका कारण यह है कि हरेक के मस्तिष्क-माद्दे पर कुछ दरारें, कुछ सिकुड़न (Convolutions), कुछ तहें (Folds) और कुछ रेखाएँ-सी होती हैं; उनके फलस्वरूप कम जगह में भी अधिक मात्रा में भूरा पदार्थ समा सकता है जबकि यदि वह दरारें आदि कम हों तो उतने ही स्थान में कम भूरा-तत्व आता है। वह दरारें, रेखाएँ आदि वास्तव में अधिक अनुभव अथवा शिक्षण के चिन्ह हैं और उनका सम्बन्ध खोपड़ी के बड़े होने से नहीं है।

एक बात और भी है। यदि एक क्षण के लिये यह मान भी लिया जाये कि खोपड़ी की लम्बाई-चौड़ाई का बौद्धिक क्षमता, योग्यता एवं कुशलता से सम्बन्ध होता है, तो भी तजर्बों एवं परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि यदि सारे शरीर के माप की तुलना में मस्तिष्क का माप देखा जाये तो नारी का मस्तिष्क पुरुष के जितना ही, बल्कि प्राय: उससे बड़ा ही होता है। जर्मनी के एक प्रसिद्ध लेखक एवं प्रोफेसर[4] ने तथा शरीर-विज्ञान विशेषज्ञ हैवलोक महोदय ने अनेक परीक्षणों से इस बात को प्रमाणित किया है। जर्मनी के उक्त प्रोफेसर- मिस्टर टी.एल. डब्ल्यू बिस्काफ ने बताया है कि स्त्री और पुरुष के मस्तिष्क में 90 और 100 का अनुपात होता है, परन्तु स्त्री और पुरुष के शरीर में 83 और 100 का अनुपात होता है। अत: यदि स्त्री के शरीर के वजन को भी हम पुरुष के शरीर के तौल के बराबर लायें तो स्त्री का मस्तिष्क पुरुष के मस्तिष्क से 17 इकाइयाँ (Units) अधिक होता है। अत: यह धारणा भी ग़लत है कि नारी का मस्तिष्क पुरुष से हल्का होता है।

इस विषय में एक और स्पष्टीकरण भी ज़रूरी मालूम होता है। एक समय था जब लोगों में यह विश्वास था कि मनुष्य की खोपड़ी का अग्रिम खण्ड (Frontal Lobe) ही ऐसा भाग है जिसमें मनुष्य की बुद्धि का निवास है। अत: यह माना जाता था कि जिस व्यक्ति का यह भाग जितना उभरा हुआ-सा और बड़ा होता है उतना ही वह व्यक्ति अधिक प्रतिभाशाली होता है। परन्तु अब शरीर-विज्ञान विशेषज्ञों ने जो परीक्षण-निरीक्षण किये हैं, उनसे यह मान्यता गलत सिद्ध हो चुकी

4. जीव-शास्त्र के इस प्रोफेसर का नाम है – T.L.W. Bischoff और इसकी प्रसिद्ध पुस्तक का शीर्षक है – Das Hirngewicht des Menschen. इसका कई भाषाओं में अनुवाद हुआ है।

है फिर भी यदि इसे सत्य मान लिया जाये तो भी शरीर-शास्त्रियों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि स्त्री के सिर का अग्रिम भाग (Frontal Lobe) पुरुष के सिर के अग्रिम खण्ड की अपेक्षा अधिक उभरा हुआ तथा बड़ा होता है। फ्रांस के एक प्रसिद्ध मस्तिष्क-विशेषज्ञ (Neuro surgeon) - पाल महोदय[5] ने अनेकानेक निरीक्षणों से यह प्रमाणित कर दिया है कि नारी और पुरुष के अग्रिम खण्ड में क्रमश: 431 और 427 का अनुपात होता है अर्थात् नारी के मस्तिष्क का अग्रिम खण्ड अपेक्षाकृत-थोड़ा-सा बड़ा और अधिक उभरा हुआ होता है।

जहाँ तक लघु मस्तिष्क (Cerebellum) का सम्बन्ध है, वह भी नारी ही का बड़ा होता है- यह बात सभी जीव-शास्त्री स्वीकार करते हैं। हाँ, पुरुषों के मस्तिष्क का केवल वही भाग बड़ा होता है जिसका सम्बन्ध पट्ठों अथवा मांसपेशियों की शक्ति (Muscular Power) से अथवा मोटर पावर (Motor Action) से है। यह तो स्वाभाविक ही है क्योंकि पुरुषों को इस प्रकार का कार्य अधिक करना होता है। हाँ, यह पाया गया है कि नारियों के मस्तिष्क की ओर, खून का दौरा भी पुरुष की तुलना में ज़्यादा अच्छा होता है। अत: प्रसिद्ध लेखक एश्ले मान्टेग[6] कहता है कि – वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि नाड़ी-मण्डल तथा मस्तिष्क के दृष्टिकोण से स्त्री-पुरुष से कमज़ोर नहीं है।

परन्तु आपको आश्चर्य होगा कि फिर भी बहुत-से बुद्धिजीवी लोग वैज्ञानिक खोज तथा निष्कर्षों से अवगत भी नहीं होना चाहते; वे निष्पक्ष भाव से किये गये परीक्षणों के परिणामों अथवा प्राप्त तथ्यों पर ध्यान भी नहीं देना चाहते और यही रट लगाते रहते हैं कि नारी की बुद्धि तो उसके बायें पाँव की एड़ी में होती है। कुछ ही वर्ष पूर्व जर्मनी के एक लेखक मेक्स फंक[7] ने तो यहाँ तक भी कहने की धृष्टता की थी कि मनुष्य और वन-मानुष (Anthropoid Ape) के बीच में अब तक अप्राप्त कही जाने वाली कड़ी (missing link) नारी ही है। उसने लिखा है कि

5. Paul Broca. 6. "To sim up' it may be said that investigation has shown that the ancient view which credited men a significantly larger amount of nervous tissue (brain) than women has been altogether orerthrown. There is much better ground for the latter view, according to which, relatively to size, the nervous or mental superiority belongs to women. "- The Natural Superiority of Women by Ashiey Montague, page-

7. इन्होंने एक किताब लिखी थी जिसका शीर्षक था – Are Women Human? by Max Funk.

नारी का मस्तिष्क पुरुष से छोटा होता है और इसलिये, नारी 'अर्द्धमानुष'(semi-human) है। देखिये तो, मनुष्य के मन में नारी के प्रति कितने भ्रान्त विचार हैं और कितना द्वेष (prejudice) है। अत: एक प्रसिद्ध जीव-शास्त्री ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि -"वैज्ञानिक खोज के इतिहास में स्त्री और पुरुष के जातीय भेद के आधार पर जो अन्तर माना जाता रहा है, उसके विषय में पढ़ कर बहुत ही दु:ख होता है क्योंकि वह मत घृणा, द्वेष, अप्रमाणित कल्पनाओं, भ्रान्त विचारों तथा अनावश्यक जल्दबाजी पर आधारित है...।"[8]

आज हम किसी भी मनोविज्ञान या जीव-शास्त्र की पुस्तक में नारी और पुरुष की बुद्धि-परीक्षा (Intelligence tests) के परिणामों को पढ़ कर देख सकते हैं कि किसमें बौद्धिक प्रतिभा अपेक्षाकृत अधिक होती है। हम यहाँ एक पुस्तक 'Differential psychology'[9] से कुछ निष्कर्ष उद्धृत कर रहे हैं जिन पर दृष्टि डालने से आपको मालूम होगा कि नारी में अनेक प्रकार की बौद्धिक योग्यताएँ पुरुष की तुलनाकृत अधिक होती हैं। हाँ, नारी गणित (Mathematics), यान्त्रिकी (mechanics) और भूल-भुलैय्या इत्यादि में पुरुष की अपेक्षा कम बौद्धिक योग्यता (I.Q) वाली होती है। परन्तु बुद्धि परीक्षा (बिने प्रणाली)[10] द्वारा ये स्पष्ट निष्कर्ष मिले हैं कि - (1) पाठशाला में जाने से छोटी आयु (Pre-School age) की कन्याओं का शब्द-भण्डार (Vocabulary) लड़कों के शब्द-भण्डार से बड़ा होता है। (2)कन्याएँ बालकों की अपेक्षा जल्दी बोलना सीख जाती हैं। (3) कन्याएँ बालकों की अपेक्षा जल्दी वाक्य बनाना सीख लेती हैं और वे वाक्यों में शब्द भी अधिक संख्या में प्रयोग करती हैं। (4) वे पढ़ना भी जल्दी सीखती हैं और पढ़ने में उनकी प्रगति भी तीव्र होती है। (5) वे वाक्य को अथवा कहानी को पूरा करने में तथा (6) संहिताओं (Codes) को सीखने में बालकों से अधिक होशियार होती

---

8. The history of opinion regarding the cerebral sexual difference forms a painful page in scientific annals. It is full of prejudices, assumptions, fallacies, over-hasty generalisations. The unscientific have had a predilection for this subject and men of science seem to have lost the scientific spirit when they approach the study of its seat.
9. Differentlal Psychology by Professors Anne Anastasi and John P. Foley, Jr.,of fordham University and of the Psychological Corporations.
10. Kuhlmann-Binet test and Army Alpha Tests.

हैं (7) वे विदेशी भाषा भी अपेक्षाकृत शीघ्र और अधिक नियमबद्ध रूप में सीख जातीं हैं तथा (8) वे स्मरण कार्य (Memory) में भी बालकों से तेज़ होतीं हैं, विशेषकर यदि वह स्मरण कार्य चित्र-स्मरण (picture-memories) या कारण-कार्य तर्क से सम्बन्धित (Logical memory) हो। गोया भाव यह है कि वे बालकों की अपेक्षा अधिक बौद्धिक योग्यता वाली होती हैं। हाँ, उन की तुलना में पुरुष ऐसे बौद्धिक कार्यों में अधिक तेज़ होते हैं जो गणित (mathematics), यांत्रिकी (mechanics) या जो स्पेस (Space) से सम्बन्धित हों (जैसे कि भूगोल)।

यदि कन्याएँ किसी प्रकार की बुद्धि परीक्षा में बालकों के पीछे भी रहती हैं तो उसका कारण यही होता है कि उन्हें उस प्रकार के कार्यों में बुद्धि लगाने के लिए समाज अवसर ही नहीं प्रदान करता अथवा वह उनसे उस-उस प्रकार के कार्य की आशा ही नहीं करता। पुनश्च, विवाह के बाद भी नारी की कुछ अभिरुचियाँ बदल जाती हैं और उसे उतने अवसर भी नहीं मिलते क्योंकि नारी बाल-बच्चों की देख-भाल, घर की सँभाल, अतिथि सत्कार, गृह-संचालन इत्यादि में अधिकतर व्यस्त रहती है। वरना यदि उस आयु में भी उसे जीवन में उन-उन क्षेत्रों में कार्य करने के अवसर मिलें, जिनमें पुरुष लगे हुए हैं तो वह बौद्धिक स्तर पर पुरुष जैसी प्रतिभा का प्रदर्शन करती है। आज विकसित देशों में हर प्रकार के कार्यों में महिलाएँ जुटी हुई हैं। उनके जो परिणाम समाज के सामने हैं, उनके आधार पर यह कहने में कोई संकोच नहीं होगा कि वे पुरुषों से किसी प्रकार भी घटिया (Inferior) प्रमाणित नहीं हुईं। बहुत-सी पुस्तकों तथा पत्रिकाओं ने इन निष्कर्षों को प्रमाणित किया है। हम यहां उन्हें उद्धृत करके विषय को अनावश्यक विस्तार देना नहीं चाहते परन्तु पुरुषों से इतनी तो अपेक्षा करते ही हैं कि वे विज्ञान तथा नवीन परीक्षणों के आधार पर प्राप्त निष्कर्षों पर निष्पक्ष भाव से विचार करके अब तो शताब्दियों से चली आ रही घृणा, द्वेष (prejudices) तथा भ्रान्त मतों (Fallicis)को मन से निकाल कर नारी को अपने समकक्ष समझें। इसमें उनका अपना भी भला है और यह व्यवहार न्याय, विज्ञान तथा व्यवहार दर्शन के अनुकूल होगा।

क्या नारी पुरुष की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक तथा चारित्रिक दृष्टिकोण से कमज़ोर होती है?

सहस्त्रों वर्षों से पुरुष नारी पर यह आक्षेप लगाता चला आया है कि नारी भाव-प्रधान (Emotional) होती है; उसका व्यवहार संवेगों और आवेगों (Emotions) पर अधिक आधारित होता है और विवेक, तर्क अथवा सूझ पर कम। उसका कहना है कि नारी अधिक चंचल होती है और वह कभी क्रोध, कभी घृणा, कभी भय, कभी झूठ, कभी कुटिलता से व्यवहार करती है। परन्तु मनोवैज्ञानिकों ने नारी के बारे में पुरुष के इन मन्तव्यों को गलत सिद्ध कर दिया है।

क्या नारी में सहनशीलता कम होती है?

पुरुष कहता है कि नारी में सहनशीलता कम होती है। परन्तु आज डाक्टरों तथा मनोवैज्ञानिकों ने जो आँकड़े इकट्ठे किये हैं, उन से प्रमाणित है कि हर देश में जो पागल खाने अथवा मानसिक रोगों के अस्पताल हैं, उनमें भरती हुए पुरुषों अथवा लड़कों की संख्या, महिलाओं अथवा कन्याओं से कहीं अधिक है। अत: मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि नारी सदमा बर्दाश्त करने में अधिक सक्षम होती है। ऐसी समस्याजनक एवं विषम स्थितियाँ जिनमें मन पर बोझ, दबाव और खिन्नता का प्रभाव पड़ता है, नारियाँ पार करने में अधिक कुशल होती हैं, यहाँ तक देखा गया है कि युद्ध के समय बमबारी के होने पर अथवा घेराव होने पर भी नारियों ने उन का अधिक मानसिक कुशलता से सामना किया है। इस विषय में डा. गिल्लस्पी के विचार विशेष ध्यान देने योग्य हैं[2] न्यूयार्क में ब्रिटिश लायब्रेरी ने भी ऐसे ही तथ्य प्रकाशित किये हैं[3]

---

1. "-Women are better 'Shock absorbers', that is they are better able to handle the severe emotional and psychological strains of modern life. It is a striking fact that admission rates to mental hospitals... are on the whole, higher for men than women.'' Ashley Montague.
2. Dr. R. D. Gillespie: 'war on Citizen and Soldier'.
3. "Women Less Prone to Bomb Shock." By British Library of Information in New york.

पुनश्च, यह भी देखा गया है कि मानसिक रोगों के अस्पतालों में जिन का इलाज होता है, उनमें से महिलायें जल्दी ठीक हो जाती हैं और इसका एक कारण यह बताया जाता है कि वे जल्दी अपने मन के संस्मरण बता देती हैं और बताती भी बहुत ही विस्तार से तथा सहज रूप से हैं। इससे स्पष्ट है कि वे मन को जल्दी ही, दमन की हुई भावनाओं से खाली करके हल्की हो जाती हैं जबकि पुरुष जल्दी और आसानी से बात नहीं बताते और उन का मन भारी रहता है तथा मानसिक ग्रंथी (complex) बनी रहती है। महिलाओं का मानसिक रोगों से जल्दी निवृत्त हो जाना इस सत्यता को प्रमाणित करता है कि वे मनोवेगों, दबे हुए मनोभावों इत्यादि से जल्दी ही छुटकारा पाने में सक्षम हैं। तब भला उन्हें मानसिक तौर पर पुरुष से दुर्बल मानना अथवा भावात्मक एवं संवेगात्मक दृष्टिकोण से अधिक कमज़ोर मानना भूल करना ही तो है।

आत्म-हत्या की घटनाओं से तथ्य प्रमाणित

फिर, जिन समाज शास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों इत्यादि ने 'आत्म-हत्या'(Suicides) के बारे में खोज की है, उनका कहना है कि अपनी हत्या करने वालों में पुरुषों की संख्या नारियों की अपेक्षा अधिक है। इस विषय में यूरोप[4] और अमेरिका[5] में जिन्होंने ऐसे आँकड़े इकट्ठे किये, उन्होंने स्पष्ट शब्दों में ये निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं। सन् 1950 में बहुत-से देशों की सरकारों ने 'विश्व स्वास्थ्य संगठन' (World Health organisation) को जो आँकड़े भेजे, उनके अनुसार भी अपनी हत्या करने वाले पुरुष महिलाओं की तुलना में दुगने से लेकर पाँच गुणा तक हैं। फिर, यह भी देखा गया है कि पुरुष जो अपनी हत्या करते हैं, उसके लिये वे साधन तथा तरीके भी अधिक हिंसात्मक अपनाते हैं जैसे कि बन्दूक या पिस्तौल का प्रयोग करना या कई मंजिल ऊपर से गिरना इत्यादि जबकि महिलाएँ प्राय: नीला थोथा

4. यह कार्य पहले Eduard Von Mayer ने सन् 1913 में किया था और प्रमाणित किया था कि नारी और पुरुष में (अपनी हत्या करने वालों का) 1 और 3 या 1 और 4 का अनुपात है।

5. यह कार्य Louis Dublin और Bessie Bunzel ने 1933 में किया था और उन्होंने देखा कि महिलाओं और पुरुषों में निज हत्याओं का अनुपात क्रमश: 3 और 10 है। उन्होंने एक पुस्तक लिखी – To Be or Not To Be.

या अधिक मात्रा में नींद की गोलियाँ इत्यादि लेती हैं। इन सभी से यह सिद्ध किया गया है कि वास्तव में अपनी हत्या करने के समय भी महिलाएँ इतनी उत्तेजित तथा उद्विग्न नहीं होतीं जितने कि पुरुष। पुनश्च, इससे यह भी प्रमाणित किया गया है कि महिलाएँ जीवन को अधिक महत्त्व और मूल्य देती हैं, वे समस्याओं को हल करने के लिये हिंसात्मक विधि-विधान नहीं अपनाना चाहतीं जैसे कि पुरुष। अत: इससे तो यही सिद्ध होता है कि महिलाएँ संवेगात्मक अथवा आवेगात्मक दृष्टिकोण से अधिक कुशल हैं, वे स्वयं को अधिक नियन्त्रण में रख सकती हैं, वे आवेगों को हिंसात्मक रीति से प्रकट नहीं करतीं।

मानसिक असन्तुलन से पैदा होने वाले रोगों द्वारा प्रमाणित

डाक्टर लोगों का कथन है कि महिलाएँ दु:ख एवं दर्द (pain) को बर्दाश्त करने में पुरुष की निस्बत अधिक समर्थ होती हैं।[6] उनका कहना है कि महिला-रोगी (Female patient) एक पुरुष रोगी से अच्छा होता है। क्या इस से यह स्पष्ट नहीं होता कि नारियों में सहनशीलता अधिक है? फिर, सर्वेक्षण द्वारा यह भी मालूम हुआ है कि पुरुषों में पेट में जड़दार फोड़े (Stomach Ulcers) नारियों की तुलना में चार गुणा होते हैं और उनमें मानसिक कष्टों से उत्पन्न होने वाले रोग, नारियों से अधिक होते हैं। अत: इससे तो यह परिणाम निकलता है कि पुरुष यदि किसी विकट समस्या के उत्पन्न होने पर अथवा सदमे (Mental Shock) की-सी स्थिति होने पर नहीं भी रोता या नहीं भी चिल्लाता तो उसका यह अर्थ नहीं कि वह ठीक ढंग से उस परिस्थिति का सामना कर लेता है या उसमें सही अर्थ में सहनशीलता है। यदि ऐसा होता तो उसमें पेट के जड़दार फोड़े (Stomach Ulcer) या मानसिक असन्तुलन से पैदा होने वाले अन्य रोग क्यों होते? स्पष्ट है कि नारी तो मन में उन्हें पचा लेती है, उन धक्कों और धमाकों को समा जाती है परन्तु पुरुष के शरीर अथवा मन पर उनका प्रभाव पड़ा रहता है, यद्यपि बाहर से उसका मुख ऐसे प्रभाव को प्रकट नहीं करता। गोया पुरुष में ही संवेगों को पार करने की दुर्बलता है न कि नारी में।

6. "Medical men of great experience know that woman bear pain much more stoically than men and I have heard many surgeons remark that women make better patients than men". - Ashley.

वास्तव में बात यह है कि विकट परिस्थितियों, समस्याओं तथा यातनाओं के उपस्थित होने पर आवेगों एवं संवेगों के प्रभाव को प्रकाशित करने का ढंग नारी में अलग रीति से और पुरुष में अलग रीति से होता है क्योंकि समाज ने ही परम्परा से दोनों को अलग-अलग तरीके का अभ्यास करा दिया है। यदि किसी दु:खद एवं विषम परिस्थिति के उपस्थित होने पर नारी रोती-चिल्लाती है तो पुरुष अपने मनो भाव को क्रोध द्वारा अथवा धक्का-मुक्का देकर व्यक्त करता है। उत्तेजित दोनों ही होते हैं - संभवत: नारी कम उत्तेजित होती है- परन्तु उत्तेजना एवं दु:ख को व्यक्त करने की रीति ही का अन्तर है। इसको लेकर पुरुष कहता है कि नारी भावुक अधिक है; वह सहनशील कम है। परन्तु पुरुष रोता नहीं तो इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि वह कोई महात्मा है या अधिक सहनशील है!

नारी के स्वभाव में अधिक मर्यादा, लज्जा, संकोच एवं सम्बन्ध-भावना

फिर यह भी देखा गया है कि पुरुष के व्यवहार की तुलना में नारी का व्यवहार अपराध से अधिक दूर (Civil) होता है। नारियाँ फिर भी बन्दूक लेकर या छुरा मार कर कत्ल नहीं कर देतीं। वे लाठी से किसी का सिर नहीं फोड़तीं। वे पुरुष की अपेक्षा, मानसिक सन्तुलन को अधिक बिगड़ने से रोकने में, स्वभावत: ज्यादा सक्षम होती हैं। वे इतनी उद्दण्ड नहीं होतीं कि किसी के भी काबू में न आयें। उनमें संकोच और लज्जा भी अधिक होती है और वे मर्यादा तथा अनुशासन का पालन करने की ओर अधिक रुझान रखती हैं और वे अधिक सामाजिक अर्थात् परस्पर सम्बन्ध निभाने की प्रेरणा वाली होती हैं। तथापि खेद की बात है कि उनके विरुद्ध हज़ारों वर्षों से यह आक्षेप लगाया जाता रहा है कि वे चंचला हैं, वे किसी के काबू में नहीं रहतीं, उनके मन को जानना असम्भव है इत्यादि। यह सब मिथ्यावाद है।

मनोवैज्ञानिकों के परीक्षणों से यह प्रमाणित हो चुका है तथा यह प्रत्यक्ष रूप से भी दिखाई देता है कि बालिकाओं की अपेक्षा बालकों का व्यवहार अधिक समस्या बन जाता है। पाठशालाओं में देखा जाता है कि बालक अधिक संख्या में कक्षा से भाग जाते हैं, युवतियों की अपेक्षा युवक अधिक बसों तथा भवनों को

जलाते और तोड़-फोड़ करते हैं, आज्ञा न मानने, अनुशासन भंग करने, सहपाठियों को तंग करने, सामने ही उद्दण्डता से बोलने, दूसरों को मारने-पीटने की वारदातें बालक ज्यादा करते हैं। सन् 1653 में इस प्रकार के एक सर्वेक्षण से देखा गया कि एक नर्सरी स्कूल के 579 बच्चों में से जो 2 और 4 वर्ष के बीच की आयु के थे, उनमें से लड़के खिलौने छीन लेते थे, दूसरों पर आक्रमण करते थे, खूब उछल-कूद करते थे, जोर-जोर से हँसते थे, कोई खतरे का काम करने में अधिक उद्यत होते थे, फिर सविनय निवेदन करने पर भी कहना नहीं मानते थे, आज्ञा पालन से इन्कार कर देते थे और इस प्रकार की अन्य वारदातें भी करते थे जबकि बालिकाएँ तुलनाकृत अधिक शान्त रहती थीं, अपेक्षाकृत अधिक अन्तर्मुखी थीं, उच्छृंखलता से पीछे हटने को अधिक उद्यत होती थीं और अपने से किसी बड़ी आयु वाले के पास बैठने को भी जल्दी तैयार हो जाती थीं। कई बार के ऐसे परीक्षणों तथा सर्वेक्षण से यह निष्कर्ष निकला कि बालक अधिक उग्र और झगड़ालू होते हैं, बालिकाएँ अपेक्षाकृत कम। तब भला यह आरोप कैसे लगाया जा सकता है कि नारी का स्वभाव अधिक चंचल और उसका चरित्र संदिग्ध होता है और कि वे अधिक भावुक अथवा संवेगशील होती हैं?

मद्यपान इत्यादि से पुरुष का अधिक आवेगात्मक होना प्रमाणित

वातावरण तथा परिस्थितियों से जल्दी प्रभावित होने वाले तो वास्तव में पुरुष ही ज्यादा होते हैं। यही कारण है कि शराब पीने वालों में अधिक संख्या पुरुषों की होती है। पुरुष, मात्रा में भी, नारी की निस्बत अधिक मद्यपान करते हैं- यह बात वैज्ञानिक रीति से किये गये सर्वेक्षणों पर आधारित है। मद्यपान की अति से मृत्यु की घटनाएँ भी पुरुषों में ज्यादा होती हैं। मनोवैज्ञानिक इस बात को मानते हैं कि मनुष्य प्राय: संवेग-सम्बन्धी कारणों (Emotional reasons) से ही अधिक मात्रा में मद्यपान करते हैं, फिर, वे भावात्मक दृष्टि से इतने दुर्बल होते हैं कि मद्यपान की आदत पर नियन्त्रण भी नहीं कर पाते। जानकारों का कहना है कि महिलाएँ ऐसा नियन्त्रण पुरुषों की तुलना में अधिक सुगमता से कर सकती हैं।

क्या नारी अधिक वाचाल होती है?

अब हम नारी के व्यक्तित्व पर लगाये गये अन्य कुछ आक्षेपों को लेते हैं। कहा जाता है कि नारी बातें बहुत करती है। वास्तव में देखा जाये तो पुरुष भी कोई कम बात नहीं करता। परन्तु उसकी बातचीत के विषय अपने दफ्तर, व्यापार इत्यादि से सम्बन्धित होते हैं किन्तु चूंकि नारी दफ्तर में जाती ही नहीं और व्यापार करती ही नहीं, वह तो पड़ोसियों से तथा सम्बन्धियों से ही मिलती-जुलती है, इसलिए वह उन ही से सम्बन्धित बातें करती है। इस बात को उठा कर पुरुष कहता है कि वह अधिक वाचाल (Gossipy) होती है। पुरुष अपने दोस्तों-मित्रों से तथा घर से बाहर अनेक व्यक्तियों से बात कर लिया करता है जबकि नारी, दिन-भर घर में बन्द रहती है और पति के घर लौटने पर उससे बात करती है अथवा बीच के समय में पड़ोसियों से बात कर लेती है। अत: यह आक्षेप मिथ्या है कि नारी बातें अधिक करती है। चलो, मान भी लिया जाय कि नारी अधिक बातें करती है, तो भी शराब पीने, क्रोध करके ऊधम मचाने, अपनी हत्या करने इत्यादि साधनों, जिनका प्रयोग पुरुष बहुतायत से करता है, उनसे तो बातें करके ही अपने मन को हल्का कर लेना अच्छा है। इस साधन को अपना कर नारी मानसिक रीति से हल्की हो जाती है और तभी तो उसकी आयु भी तुलनाकृत दीर्घ होती है। बात करना, तनाव मिटाने का एक बड़ा साधन (Tension Releaser) है। पुरुष तो घर आकर नारी को अपना दु:खड़ा सुना देता है, वह उसे झाड़झपक भी देता है, रौब भी कर लेता है, तब नारी यदि अपने भी मन का कुछ राग अलापती है तो चूँकि पुरुष का दृष्टिकोण समानता का नहीं है, इसिलिये वह कहता कि नारी बातूनी है वास्तव में यह अतिशयोक्ति है।

क्या नारी में काम-वासना अधिक होती है?

नारी पर प्राय: एक आरोप यह भी लगाया जाता है कि उस में पुरुष की अपेक्षा वासना अधिक होती है। शास्त्रों और संस्कृत के ग्रन्थों में यह कहा गया है कि स्त्री में काम वासना पुरुष से आठ गुणा होती है। यदि शरीर-विज्ञान तथा मनोविज्ञान की दृष्टि से देखा जाए तो नारी के बारे में चिरकाल से चली आ रही

यह मान्यता पूर्णत: गलत है। नारी की शारीरिक बनावट में तथा उसकी मनोवृत्ति में पुरुष की अपेक्षा ऐसी कोई विशेषता नहीं होती। परन्तु फिर भी लोग बिना किसी वैज्ञानिक आधार के हज़ारों वर्षों से ऐसा ही मानते चले आ रहे हैं। एक लेखक[7] ने तो यहाँ तक कहा है कि – 'पुरुषों में भी काम होता तो है परन्तु नारी तो कामाधीन ही होती है।' परन्तु वास्तव में यह नितान्त ग़लत है। इस विषय में 'मनोविज्ञान की रूप-रेखा' नामक पुस्तक मे निम्नाँकित वाक्य पठनीय हैं। यह पुस्तक भारत में एक पुरुष मनोवैज्ञानिक की ही लिखी हुई है। ऐसे ही वाक्य आप को हर मनोविज्ञान तथा जीव-विज्ञान की पुस्तक में पढ़ने को मिलेंगे।

'संस्कृत की पुस्तकों में यह सामान्य रूप से पाया जाता है कि स्त्रियों में पुरुष की अपेक्षा काम-वासना (Sex instinct) आठ गुणा अधिक प्रबल होती है। परन्तु यह अत्युक्ति ही प्रतीत होती है। सत्य शायद इसके विपरीत ही है। पुरुष ही शीघ्र उत्तेजित होता है, प्राय: पहल वही करता है और अपनी हरकतों से स्त्री की प्रसुप्त वासनाओं को उकसाता और उत्तेजित करता है। पुरुष आक्रामक (Aggressive) होता है, स्त्री प्राय: शान्त होती है।'[8]

इसी प्रसंग में उक्त लेखक के ये वाक्य भी पढ़िये -

'... स्त्री लज्जाती और सकुचाती है। विपरीत इसके पुरुष का व्यवहार उद्धत और अहंभाव-पूर्ण होने लगता है। ... किसी से प्रेम होने पर वह छेड़छाड़ करने लगता है, बन्धन तोड़ देने को उतावला होता है, जबकि स्त्री मर्यादा से बाहर पग धरने में सुकुचाती है।'

इसी विषय पर एक विदेशी मनोवैज्ञानिक के निम्नलिखित वाक्य पढ़िये। वीयाना के लेखक आटो वीनिंगर के वाक्य की चर्चा करते हुए उसने कहा है- ''यह कथन (कि नारी काम के वश होती है) सत्यता के विपरीत है। पुरुष को सदा 'काम' की खुजली रहती ही है।' वे किसी भी सुन्दर नारी के मिलने पर काम-भोग के लिये तैयार हो जाते हैं, नारी को तो भोग के लिए पहले मानसिक रूप से तैयार

7. Otto Weininger of Vienna: "Men Possess sex; women are possessed by it. (Book: 'sex and Character')

8. पृष्ठ 307 और 308।

9. यह कलियुग के सर्व साधारण मनुष्य के लिये कहा गया है।

करना पड़ता है। फिर भी प्रस्ताव पहले पुरुष की ओर से होता है।[10]

अत: शरीर-विज्ञान तथा मनोविज्ञान के आधार पर तो यह कहना ग़लत होगा कि नारी में काम-वासना अधिक होती है। न तो नारी के मस्तिष्क की रासायनिक बनावट (Chemical Structure) ही ऐसी होती है, न ही उसकी शारीरिक संरचना (Physical constitution) में ऐसा कुछ पाया जाता है।

परन्तु चूंकि पुरुष देखते हैं कि नारी श्रृंगार प्रिय है, वह स्वयं को बनाती-संवारती रहती है, इससे वे ग़लत धारणा बना लेते हैं कि वह 'काम' की भूख से तड़प रही है। वास्तविकता तो यह है कि समाज में शुरू से ही यह प्रचार किया गया है कि 'कन्या पराये घर की अमानत है' और कि नारी विवाह करने तथा पति के पास होने में ही उच्च है और कि पति को प्रसन्न करना, उसके सम्मुख सज-धज कर रहना ही उसका कर्त्तव्य है, इसलिये नारी श्रृंगार करती है वरना वासना तो पुरुष ही में अधिक है, तथापि यह दोष नारी के सिर मढ़ा जाता है और उसके चरित्र के बारे में तरह-तरह के अनुमान लगाये जाते हैं तथा उसे संदिग्ध माना जाता है जब कि वास्तव में मनुष्य की अपनी ही मनोवृत्ति ऐसी है।

क्या नारी झूठी होती है?

संस्कृत ग्रन्थों में जगह-जगह यह भी कहा गया है कि नारी झूठ बहुत बोलती है। उसका चरित्र और उसकी बात विश्वसनीय नहीं होती। 'तिरिया चरित्र'के नाम से नारी के चरित्र को घटिया तथा छल, कपट एवं दम्भ से युक्त बताने के लिए अनेक कथाएँ-कहानियाँ मनुष्य ने रची हुई हैं परन्तु वास्तविकता तो यह है कि पुरुष अपने व्यापार में, दफ्तर में, दोस्तों में तथा स्वयं पत्नी के साथ भी झूठ बोलता है। आज पुरुष बिक्री कर (Sales Tax) तथा आयकर (Income Tax) के मामलों में कितना झूठ बोलता है! वह व्यापार के समय सामान की कीमत कितनी अधिक बता कर ग्राहक को फँसाता है! वह घर देर में आने पर अथवा घर में खाना न

10. "Never was the truth so blatantly inverted. The truth is that men are possessed by sex, women possess it. Men in the cultures of western world, seem to be in a chronic state of sex-irritation and are ready to indulge in intercourse with any presentable female at almost any time. This is not the case with the female who has to be psychologically properly prepared before she is willing to accept the advances of the male... page 56: George Allen and Unwin.

खाने का कारण, कितनी बार झूठ बतलाता है!!! परन्तु स्त्री यदि उसके डर के मारे झूठ बोलती है तो वह बात का बतंगर बना देता है। हालाँकि होना यह चाहिए कि वह स्त्री से क्रोध न करे, उसे डराये-धमकाये नहीं, तब स्त्री अवश्य ही सत्य बोलेगी क्योंकि उसमें पुरुष की अपेक्षा भगवान और पाप से अधिक डर है और उसमें भक्ति-भाव भी अधिक है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वास्तव तें नारी भावात्मक (Emotional) तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से पुरुष की अपेक्षा अधिक दुर्बल नहीं है बल्कि बाह्य उत्तेजकों (Stimuli) के प्रति अधिक संवेदनशील (Sensitive) होते हुए भी आवेगों को काबू में रखने की क्षमता उसमें अधिक है। चारित्रिक दृष्टिकोण से वह पुरुष से कम अनुशासन-प्रिय नहीं है, वह सत्य-वादन में तथा ब्रह्मचर्य पालन में भी उससे पीछे नहीं है परन्तु वह पुरुष के आतंक से, उसके क्रोध और आक्रोश से, उसके रौब और शोषणात्मक हथकण्डों से किंचित घबराती है और पुरुष ने ही उसे विषय की गुड़िया बना रखा है। हजारों वर्षों से नारी को 'दुर्बल-दुर्बल' कहते-कहते उसने उस के मन में भी ऐसा विश्वास (Indoctination) भर दिया है कि शायद वह सचमुच दुर्बल ही है! वस्तुत: ऐसी मान्यता है सरासर गलत ही।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण से नारी पुरुष के समकक्ष

साधुओं, संन्यासियों, पण्डितों, आचार्यों इत्यादि ने तो अपना जीवन आध्यात्मिक उन्नति और तत्सम्बन्धी साधना में लगाया होता है और यह जन-साधारण को भी उपदेश करते हैं कि वे सभी को आत्मवत् अथवा आत्मिक दृष्टि से देखें तथा किसी की निन्दा न करें, परन्तु देखा गया है कि जैसे वे हरिजनों को आध्यात्मिक विद्या से वर्जित करने के पक्ष में रहे हैं, वैसे ही वे प्राय: नारी को भी ज्ञान-अध्ययन से वंचित रखते आये हैं तथा नारी का तिरस्कार भी करते आये हैं। वास्तव में तो इनका यह व्यवहार स्वयं इन्हीं के मूल मन्तव्यों और सिद्धांतों के प्रतिकूल है क्योंकि स्त्री और पुरुष का भेद देह आधारित है, आत्मा के स्तर पर उनमें अन्तर नहीं है।

शरीर एक चोला है, आत्मा ही चेतन है

सभी अध्यात्मवादी इस बात को मानते हैं कि शरीर तो प्रकृति का है, यह नाशवान है, पाँच तत्वों का बना पुतला अथवा चोला है। तब फिर इसके आधार पर क्या झगड़ा करना? समाज में तो दोनों ही प्रकार के चोलों की आवश्यकता है। विभिन्नता ही इस सृष्टि की शोभा भी है। तब फिर स्त्री चोले की निन्दा क्यों? हरेक चोले में अपनी-अपनी खूबी, अपना-अपना गुण है। अध्यात्मवादी को तो हरेक से गुण ही लेना है, उसे अवगुण का ढिंढोरा पीटने की क्या आवश्यकता है? संसार में पहले भी एक-दूसरे के प्रति घृणा, द्वेष, जाति-पंक्ति के भेद हैं, तब यदि अध्यात्मवादी भी जातियता के ऊँच-नीच के भेदों का पिटारा खोल बैठें और वे भी मातृ-जाति का तिरस्कार करने लगें तो यह शोभा नहीं देता। अज्ञानी तथा ज्ञानी के वचनों में अन्तर तो होना ही चाहिए।

फिर, जो लोग 'सर्वं खलुइदं ब्रह्म' के सिद्धांत को मानते हैं, उनमें तो शरीर-दृष्टि होनी ही नहीं चाहिए। वे तो जगत को ही मिथ्या, स्वप्न की न्यायीं अथवा प्रतीति मात्र ही मानते हैं, तब देह-अध्यास की गुँजायश ही कहाँ रह जाती है? अद्वैतवाद का नारा लगाने वाले तो एक ही तत्व मानते हैं, तब भला वे स्त्री को 'सर्प', 'नरक का द्वार' – ऐसी संज्ञाएँ क्यों देते हैं? हम तो 'सर्वं खलुइदं ब्रह्म'

के सिद्धांत को नहीं मानते परन्तु जो मानते हैं, वे अपने ही मत से विचलित क्यों होते हैं?

जो लोग प्रकृति, पुरुष और परमात्मा तीनों ही को अनादि और अविनाशी सत्तायें मानते हैं, उन्हें भी तो नारी को परमात्मा का 'अमर पुत्र' ही मानना चाहिए और उनसे वैसा ही स्नेह-युक्त एवं तिरस्कार-रहित व्यवहार करना चाहिए।

अध्यात्म में कई निजि विशेषताओं से नारी की श्रेष्ठता

नारी के जीवन में कुछ ऐसी विशेषताएँ होतीं हैं जिनके कारण वह अध्यात्म में पुरुषों से भी आगे निकल सकती है तथा समाज का चारित्रिक नव-निर्माण करने में भी विशेष रूप से कुशल सिद्ध हो सकती है। अध्यात्म में नारी को विशेषता प्रदान करने वाले कई सामाजिक, मानसिक और आर्थिक कारण हैं जिनमें से कुछेक का उल्लेख हम यहाँ कर रहे हैं –

कन्या-वृत्ति

कन्या अवस्था में बहुत-से गुण होते हैं। मनोवैज्ञानिकों ने सर्वेक्षण के आधार पर इस बात को माना है कि कन्या अथवा कुमारी बालकों की अपेक्षा कम उच्छृंखल, कम उद्दण्ड और कम झगड़ालू होती है। वह बड़ों का कहना जल्दी मान लेती है, अनुशासन में सहज ही बंध जाती है और उसमें अन्तर्मुखता तुलनाकृत अधिक होती है। स्पष्टत: ये वृत्तियाँ ईश्वरीय ज्ञान तथा योग को सीख कर दिव्यता के उत्कर्ष में बहुत ही सहायक होती हैं। मन के अनेक प्रकार के संकल्पों-विकल्पों को शान्त करने के लिए इन निषिद्ध वृत्तियों की अनुपस्थिति अथवा इनकी कम उग्रता कन्या के लिए स्वभाव-जन्य वरदान सिद्ध होती है। पुनश्च, कन्याओं में बालकों की अपेक्षा स्मृति, एकाग्रता तथा अपने कार्य में तत्परता भी अधिक पाई जाती है – ऐसा मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गये परीक्षणों से प्रमाणित होता है। अत: ईश्वरीय ज्ञान-बिन्दुओं की स्मृति तथा योगाभ्यास के लिए एकान्त-प्रिय स्वभाव तथा एकाग्रता में कुशलता, कन्याओं को योग में शीघ्रता से अधिक उच्च स्थिति प्राप्त करा देते हैं।

पुनश्च, कन्याओं में लज्जा, संकोच तथा भय भी बालकों की अपेक्षा अधिक

होता है। अत: वे दिव्य गुणों की धारणा में तथा अमर्यादा एवं आसुरियता के त्याग के पुरुषार्थ में अधिक सुगमता से सफल हो सकतीं हैं।

फिर, भारत की कन्याएँ तो बहुत छोटी आयु से ही यह सुनने और समझने लगतीं हैं कि – ''कन्याएँ पराये घर की अमानत होती हैं।'' अत: उनकी बुद्धि का लंगर तो घर से उठा हुआ-सा रहता है। घर में रहते हुए भी वे घर के सामान और माल को अपना नहीं समझतीं क्योंकि वह सब एक दिन वहीं छोड़ कर, उन्हें चले जाना होता है। अत: साधना के लिए जिस उपराम अवस्था अथवा मन के अलगाव की जिस भूमिका की आवश्यकता होती है, वह उनकी सामाजिक स्थिति के कारण स्वत: ही बनी होती है।

कन्या को मालूम होता है कि एक दिन उसके माता-पिता भी उसे दूसरे किसी के हाथ सौंप देंगे। उसे यह भी ज्ञात होता है कि वह खाली हाथ ही है; उसका कोई नहीं है, न ही कुछ उसका है। अत: यदि इस अवस्था में कन्या में ज्ञान एवं योग का बीजारोपण किया जाय तो वह 'सौ ब्राह्मणों से उत्तम' बन सकती है। गोया कन्या-वृत्ति योग के लिये अनुकूल भूमिका उपस्थित करती है।

वधू

फिर जब उसका विवाह हो जाता है तो उसमें 'सजनी' भाव उत्पन्न होता है। यों तो सगाई होने के बाद ही उसके नेत्र, होने वाले वर के सिवा सभी को पर-पुरुष अथवा भाई की दृष्टि से देखते हैं परन्तु विवाह के पश्चात् तो वह माथे पर बिन्दी लगा लेती है तथा माँग में सिन्दूर भर लेती है जो कि एक साईन बोर्ड (Sign-board) की न्यायीं काम करता है कि मैं एक पतिव्रता नारी हूँ। तब उसकी बुद्धि भटकती नहीं है। वह मर्यादा, लज्जा और नियम में रहती है। इस अवस्था में भारत की नारी तो एक प्रकार से तन-मन-धन, सर्वस्व-सहित पति की हो जाती है। गोया देह में रहते भी वह देह पर अपना अधिकार नहीं समझती, वह पति को प्रसन्न रखने ही में लगी रहती है; उसकी सेवा को साधती है। उसी पर न्योछावर-सी हुई होती है। वह ही उसके प्रेम का केन्द्र-बिन्दु होता है। उसे ही वह अपना एक बल, एक भरोसा मानती है। अत: नारी की यह स्वभाव-जन्य-वृत्ति मार्गान्तरीकरण से

उसकी योग-साधना में बहुत ही मूल्यवान निधि सिद्ध होती है। नारी को तन-मन-धन से प्रभु के समर्पित होना सहज है; उस प्रभु ही को 'एक बल एक भरोसे' के रूप में साधना सुगम है; उसे अपनी बुद्धि को सब ओर से समेट कर एक ही परमेश्वर रूप पति अथवा साजन में जुटाने में अधिक सुविधा होती है; उसे मन-मस्तिष्क में बिन्दु (ज्योति-बिन्दु) आत्मा की स्मृति का तिलक लगाने में सुविधा होती है। तन-मन-धन से प्रभु ही के प्रति समर्पित भाव ही तो सच्चा एवं सर्वश्रेष्ठ संन्यास है। यह संन्यास वह जंगल में जाये बिना ही कर सकती है।

फिर, विशेष बात यह भी है कि कन्यावस्था में यह मालूम ही नहीं होता कि 'भावी' किस पुरुष के साथ पल्ला बाँधेगी? वह व्यक्ति कैसा होगा? जब वधू अपने ससुराल में आ जाती है तो भारत देश में, जहाँ संयुक्त परिवार (Joint Family) की पद्धति प्रचलित है, वधू को घर के सभी सदस्यों से मिल कर रहना होता है। सभी के भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वभाव और संस्कार होते हैं, उनके ही साँचे-ढाँचे में वह स्वयं को ठीक बैठाती (Adjust करती) है। अत: पहले कन्यापन की अवस्था से निकल कर विवाह करते समय भी एक प्रकार से जीते-जी मरना पड़ता है क्योंकि घर और परिवार बदल जाता है, मायके से निकल कर ससुराल जाना होता है और अब घर में जाकर दूसरी बार मरना पड़ता है क्योंकि नये सम्बन्धियों में स्वयं को समाना पड़ता है। विवाह होने के बाद नाम बदल जाता है, जाति (Sub-caste) भी बदल जाती है और कदम-कदम किन्हीं दूसरों के कहने पर तथा उनकी निगाहों के नीचे चलना होता है – यह उसी जन्म में एक प्रकार से मरना ही तो है। ईश्वरीय ज्ञान तथा योग के साधना-पथ पर चलने वाले को भी तो मरना ही पड़ता है, क्योंकि उसे भी जीते-जी देह के सम्बन्धियों से ममत्व छोड़ कर मन का नाता एक प्रभु ही से जोड़ना होता है तथा पुराने संस्कारों से मर-मिटना होता है। अत: उनके जीवन को 'मरजीवा जन्म' अथवा 'मृतजीवा जीवन' कहा जाता है। नारी के लिये तो यह सहज ही है क्योंकि उसे तो वैसे भी सांसारिक जीवन में घर और सम्बन्धी छोड़ कर, मन के नाते को एक ओर से उठा कर दूसरी ओर लगाना होता है।

माता-वृत्ति

नारी जब गृहणी बनती है तो उसमें संग्रह की प्रवृत्ति प्रबल होती है। वह घर के लिए चीज़ों का संचय करती है, वस्तुओं को इकट्ठा करती है और उन्हें संवार कर भी रखती है। इसी प्रकार की वृत्ति को वह ज्ञान-बिन्दु इकट्ठे करने में सहज ही लगा सकती है और ज्ञान के महावाक्यों को संजोने तथा उससे आत्मन् को संवारने की ओर ध्यान दे सकती है।

फिर, बच्चों के प्रति माता का कैसा वात्सल्य होता है! वह उनके लिये कितना त्याग करती है? माँ के उस मातृत्व-जैसी चीज़ तो संसार में और कुछ है ही नहीं। वह अपने व्यक्तिगत स्वार्थों को ताक पर रख कर बच्चों तथा घर के दूसरे सदस्यों की सुख-सुविधा पर अधिक ध्यान देती है। वह स्वयं भूखी रह कर भी बच्चे की क्षुधा को तृप्त करना अपना परम कर्त्तव्य मानती है। वह अपनी नींद का, अपने आराम का भी विचार न करके दूसरों की सेवा में लगी रहती है। घर की धुरी, घर की स्थिरता का केन्द्र-बिन्दु वही तो होती है। अत: अपने इन स्वभाव-सुलभ गुणों – सेवा, त्याग, तपस्या, नि:स्वार्थता, स्नेह, उत्सर्ग इत्यादि को वह ज्ञान तथा योग का पुट देकर जगदम्बा बन, विश्व के कल्याण-कार्य में बहुत ही महत्त्वपूर्ण पार्ट निभा सकती है। नारी के पुत्र हो या न हो, उसमें 'माता-पन' का संस्कार तो होता ही है; वह स्वभाव से ही दूसरों के सुख-सुविधा का अधिक ध्यान करती है और अपना कम। उसमें पारिवारिक भावना तथा दूसरों के प्रति स्नेह सदा होता ही है; वह कभी भी किसी का अमंगल, अहित अथवा अकल्याण नहीं सोचती। माता का यही स्वरूप ज्ञान और योग द्वारा निखार पाकर, तप कर, शुद्ध होकर, अलौकिकता पाकर, विश्व के कल्याणार्थ बहुत ही प्रभावशाली सिद्ध हो सकता है।

फिर, गृहणी का तो घर में ऐसा स्थान होता है कि उसे सभी का दु:खड़ा सुनना पड़ता है – पति अपने मन के गुबार को वहीं आकर झाड़ता है, बच्चे भी उसी की गोद में आकर चैन लेते हैं, उसी के सामने अपनी परेशानियाँ अलापते हैं। अत: माता किसी ऐसी धातु से बनी होती है कि वह अपनी कठिनाइयों का भी सामना करती है, साथ-साथ दूसरों की बातें भी सुन कर उन्हें मन में समा लेती है और सभी को अपनी मदल वाणी से, प्यार और दुलार से, सहलाने वाली थपथपी

से, उनके मन पर मल्हम का काम करती है। यहाँ तक कि पत्नी को जीवन में बहुत बार, पति से भी मातृवत् व्यवहार करना पड़ता है। कन्या की अवस्था से लेकर ही उसमें ऐसा गुण होता है कि उसके मन में दूसरों के लिए भी एहसास (सहानुभूति) होता है; वह दु:ख हरने को उद्यत होती है। यह उसमें एक ऐसा कुदरती गुण है जो बहुत ही महान् है। आज संसार में मनुष्य को इसी की ही तो परम आवश्यकता है। अत: नारी यदि ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज राजयोग की संजीवनी बूटी अपने हाथ ले ले तो वह जगत-भर के मनुष्यों को प्यार-मोहब्बत और दुलार देकर, उनके भी बुरे संस्कारों को मिटा कर, उनके जीवन को ज्ञान एवं योग के आनन्द से संजोने का महान कार्य कर सकती है।

भक्ति-भावना

हम यह भी तो देखते हैं कि हर मन्दिर में, गुरुद्वारे में, कथा-कीर्तन में, गिरिजाघर और सत्संग में माताओं-कन्याओं की ही संख्या अधिक होती है। इसका कारण यही तो है कि उनमें भक्ति-भावना अधिक है। इस बारे में प्रोफेसर फ्रेडरिक (Prof. Fredrick H. Lund) ने 'विश्वामित्र' पर जो शोध कार्य किया, उसके आधार पर उन्होंने लिखा है कि नारियाँ, पुरुषों की अपेक्षा अधिक संख्या में दैवी स्वराज्य और ईश्वरीय शासन (Golden Rule) में विश्वास करती हैं; वे ऐसा भी मानती हैं कि परमात्मा है और कि चारित्रिक मूल्यों का उद्‌गम किसी मनुष्य से नहीं बल्कि परमात्मा ही से हुआ है।'' कहने का भाव यह है कि महिलाएं ईश्वर और उसके कर्त्तव्य में अधिक आस्थावान होतीं हैं।

परमात्मा में आस्था या प्रभु की ओर मन की लगन का एक विशेष कारण यह भी है कि कन्या को अपने पिता से या नारी को अपने पति से जब सुख नहीं मिलता, श्रेष्ठ व्यवहार नहीं मिलता तो वह परमात्मा ही को परमपिता अथवा आत्मा के पति के रूप में देखती है। सांसारिक पति तो वैसे भी उसके मन का दु:ख-दर्द कम ही सुनता है, उसे अपनी ही परेशानियाँ ज्यादा सुनाता है, उस पर रौब भी खूब डालता है और उसे स्वतन्त्रता भी कम ही देता है और पिता यद्यपि स्नेह देता है तो भी उसके मन में यह ख्याल तो रहता ही है कि इसने तो यहाँ

से जाना ही है। अत: वह प्रभु ही से सच्चा, स्थायी एवं पवित्र प्यार पाने को आतुर होती है।

बात यह भी है कि नारी में, पुरुष की अपेक्षा दया की भावना और भय किंचित अधिक होता है। अत: वह पाप से तथा प्रभु के दण्ड से भी अधिक भय करती है। इसलिये वह प्रभु ही की शरण लेना चाहती है ताकि वह पाप और सन्ताप से बचाये।

फिर, नारी का प्रतिदिन की आवश्यकताओं और उतार-चढ़ाव से गहरा वास्ता पड़ता है। अत: वह यथार्थवादी तथा व्यवहारिक होती है परन्तु साथ-ही-साथ वह आदर्शवादी भी होती है। वह भूख और प्यास की तृप्ति की आवश्यकता को पहचानते हुए भी, जीवन में उससे भिन्न किसी उच्च आदर्श के प्रति सचेत होती है। वह वर्तमान को महत्त्व देते हुए भी (शिशु के रूप में) भविष्य की धातृ और सृजनकर्त्ता होने के अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाने की ओर भी जागरूक होती है इसलिए भी वह सत्संगों में अधिक संख्या में उपस्थित होती है जबकि पुरुष रोटी और संसार के बखेड़ों को इतना ज्यादा महत्त्व दे बैठता है कि सर्वोत्तम पुरुषार्थ से वंचित रह जाता है।

पुनश्च, नारी शिव के अतिरिक्त सौंदर्य के प्रति भी अधिक झुकी रहती है। उसमें सौंदर्य-बोध (Aesthetic Sense) अधिक है। नमूना, रूप, रंग (Design, Form, Colour) इत्यादि की सही पहचान जितनी नारी में होती है, उतनी पुरुष में नहीं होती। वह जिसे हाथ लगाती है, उसे संवारती ही है, इसलिए 'नारी' के हाथ में संवारने तथा सजाने की कला (Feminine Touch) का महत्त्व है। इसी भूमिका को लिए हुए वह परमात्मा को, जो कि शिवं के साथ-साथ परम सुन्दरं भी है, पाने का यत्न करती है।

नारी में प्रेम तो अगाध है और प्रेम ही योग का मुख्यतम साधन है अथवा मूल मंत्र है। नारी का बच्चों में तथा पति में अपार प्रेम होता है, तभी तो वह उन पर अपना जीवन भी न्योछावर करने को तैयार होती है। यही प्रेम वह प्रभु में स्थिर करके अत्यन्त महान योगिनी बन जाती है।

नारी द्वारा स्वर्ग का द्वार खोला जा रहा है

इस प्रकार, हम देखते हैं कि बीज रूप में नारियों में अनेकानेक ऐसी दिव्यताएँ, शक्तियाँ अथवा योग्यताएँ हैं जिन्हें सींचने से वह आध्यात्मिक शक्ति एवं दिव्य गुणों से इतनी तो महान् बन सकतीं हैं कि सारे जगत को पलट कर रख सकतीं हैं। परन्तु इस कार्य को कोई भी मनुष्य नहीं कर सका; उसके लिए यह कार्य सैद्धान्तिक तथा व्यवहारिक रूप में सम्भव था भी नहीं, क्योंकि वह तो नारी को 'नरक का द्वार' मानता रहा; उसे माया का रूप अथवा सर्पिणी बताता रहा; पुत्र को भी एकान्त में माता के पास बैठने के लिए वर्जित करता रहा तथा नारी को ईश्वरीय ज्ञान का अध्ययन भी निषिद्ध बताता रहा। अत: परमपिता परमात्मा शिव जिन्हें 'अर्द्ध-नारीश्वर' भी कहा गया है और 'माता एवं पिता' भी, उन्होंने यह कार्य किया है। उन्होंने 'प्रजापिता ब्रह्मा' के माध्यम से कन्याओं-माताओं को सहज रीति से ईश्वरीय ज्ञान, राजयोग तथा दिव्य गुणों की शिक्षा देकर शक्तिरूपा बना दिया है। अब यह अहिंसक शिव-शक्ति सेना, यह श्वेत-वस्त्र धारिणी ब्रह्माकुमारियाँ ही नर-नारी में समान रूप से मनो-परिवर्तन लाकर, उनके संस्कारों को पवित्र बना कर सतयुग की स्थापना कर रही हैं। दूसरे शब्दों में 'नारी नरक का द्वार है' वे इस उक्ति को ग़लत सिद्ध करतीं हुई ***स्वर्ग का द्वार*** खोल रहीं हैं। प्रत्यक्ष को प्रमाण की क्या आवश्यकता है?

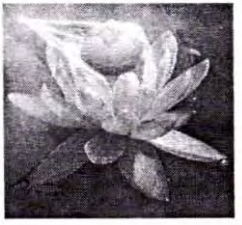

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय द्वारा नारी मुक्ति का अनुपम कार्य

'नारी मुक्ति' से सम्बन्धित कार्य, योजनाबद्ध रीति से एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान द्वारा किया जा रहा है। इस संस्थान का नाम 'प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय' है। बिना शोर मचाये, यह संस्थान पिछले 65 वर्षों से इस महत्त्वपूर्ण कार्य में प्रवृत्त है। अभी बहुत-से लोगों का इस ओर ध्यान नहीं गया है और कई लोगों ने तो इसे सही रूप में समझा ही नहीं है। नारियों को समुचित अधिकार दिलाने का नारा इस संस्था ने, अथवा इसके संस्थापक ने तब लगाया था जब किसी कोने से कोई इस बारे में, किसी प्रकार की आवाज़ उठाने की हिम्मत ही नहीं करता था। अत: तब पुरुषों द्वारा, विशेषकर नारी को 'भोग्या' मानने वाले पुरुषों द्वारा तथा उन पुरुषों द्वारा, जो कि मनु, वाल्मीकि, तुलसीदास इत्यादि का मत मानते हुए नारी को दासी के समान अपने ही वश में करके रखना चाहते थे, समाज में तरह-तरह की भ्रान्तियों का फैलाया जाना तथा इस कार्य का विरोध होना स्वाभाविक था। वरना यदि निकटता से देखा जाय तो प्रबुद्ध एवं नीति-शुद्ध बहनों-माताओं की इस संस्था ने जो कार्य किया है, वह विश्व के इतिहास में अद्वितीय है। इस संस्था का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है –

इसकी स्थापना

इस अनोखी महिला-संस्था को ठीक तरह जानने के लिये किंचित यह जान लेना ज़रूरी है कि इसकी स्थापना किस हालात में हुई थी। इसके इतिहास का प्रारम्भ इस प्रकार है कि हैदराबाद (सिंध) के एक प्रसिद्ध व्यक्ति – दादा लेखराज – जो कि उन दिनों कोलकाता में एक नामवर जौहरी थे और जो नित्य प्रति श्रीमद्भगवद्गीता का पाठ तथा भक्ति किया करते थे, को सन् 1935 में कुछ दिव्य साक्षात्कार उस समय हुए थे जब वे अपने धन्धे से कुछ दिन का अवकाश निकाल कर वाराणसी में अपने एक मित्र के बगीचे में भक्ति एवं ध्यान में पूर्ण समय दे रहे थे। उस साक्षात्कार में उन्हें यह भी ईश्वरीय आदेश मिला था कि स्त्री-पुरुष के

बीच भोग-विलास का जो दृष्टिकोण दिनोंदिन पनपता आया है, उसे ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज राजयोग द्वारा ठीक किया जाय ताकि एक नये, दैवी समाज की नींव पड़े, जिसे 'सतोप्रधान' अथवा 'सतयुगी समाज' कहा जा सके और जिसमें पुरुष और नारी का एक-दूसरे से सम्बन्ध वासनात्मक न होकर पवित्र स्नेह पर और आत्मिक दृष्टिकोण पर आधारित हो।

अत: दादा लेखराज जी ने इस ईश्वरीय आदेश को शिरोधार्य मान कर अपने जवाहरात के कार्य से सदा के लिये छुट्टी ली। अब वे योगाभ्यास में लगे रहते तथा प्रतिदिन अपने ही निवास-स्थान पर लोगों को ईश्वरीय ज्ञान सुनाने के निमित्त बनते। इन प्रवचनों में वे नर-नारियों को वासना-भोग का दृष्टिकोण छोड़ने, तथा 'पवित्र' बनने की भी, बड़े ही प्रभावशाली शब्दों में, ताकीद करते। विशेषकर माताओं-कन्याओं से वे यह कहा करते थे कि वे फैशन न करें, पाश्चात्य बनाव-शृंगार का अन्धानुकरण न करें, प्रतिदिन ज्ञानामृत पीयें, सत्संग किया करें और उत्तेजनाकारी आहार (शराब, माँस, अण्डे) इत्यादि का त्याग करें तथा अपनी दृष्टि-वृत्ति को शुद्ध बनाते हुए सरस्वती, दुर्गा, लक्ष्मी इत्यादि के समान बनें ताकि भारत का कल्याण हो।

कन्याओं और नारियों को शक्तिशाली, आत्म-निर्भर और महान् बनाने का कार्यक्रम

दादा लेखराज जी ने एक दूसरा भवन बनवाया और वहाँ कन्याओं के लिये छात्रावास (Hostel) तथा पाठशाला (School) की भी व्यवस्था की। वहाँ अन्य लौकिक पठनीय विषयों (Secular Subjects) के अतिरिक्त आध्यात्मिक शिक्षा भी नित्य-प्रति दी जाती । प्रथम कक्षा के बालकों तथा बालिकाओं के लिये वर्णमाला (Alphabet) भी आध्यात्मिक पुट (Spiritual Orientation) देकर बनायी गई थी। बच्चों को शारीरिक व्यायाम कराने के अतिरिक्त मानसिक-आध्यात्मिक अभ्यास भी कराया जाता था तथा उनकी आदतों के सुधार पर विशेष ध्यान दिया जाता था। संगठन में रहते हुए, उनका परस्पर व्यवहार दिव्य हो और उनके चरित्र महान् बनें – इस बात को बहुत महत्त्व प्रदान किया जाता था। बड़ी

कन्याओं के लिये सिलाई, कढ़ाई और संगीत की शिक्षा की भी व्यवस्था की गई थी ताकि वे कुछ आवश्यक कलाएँ भी सीख लें और आर्थिक दृष्टिकोण से आत्म-निर्भर हो सकें। यह लौकिक और आध्यात्मिक शिक्षा देने वाली, सभी कन्याएँ-माताएँ ही थीं, जिन्हें बाबा से मार्ग-प्रदर्शना मिलती थी। स्कूल का वातावरण अति स्वच्छ और कार्यक्रम इतना व्यवस्थित था कि शिक्षा-विभाग के लोग प्रशंसा करते थे।

इस सारी व्यवस्था से सिन्ध के मुखी लोग तथा साधारणजन बहुत प्रभावित थे और सभी की यह शुभेच्छा थी कि वे अपनी पुत्रियों-पौत्रियों एवं बालकों को ऐसी शिक्षा दिलाएँ। बहुत-से सामाजिक-प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्तियों ने अपने बच्चों को वहाँ प्रवेश दिलाया और उनके यहाँ से बहुत-सी महिलाएँ, कन्याएँ भी उनके साथ ही सत्संग सुनने आती थीं। आने वालों में कई-एक विधवाएँ भी थीं, जिन्हें पति के देहान्त के बाद मन में बहुत अशान्ति थी और वे समाज तथा सम्बन्धियों के निरर्थक रीति-रिवाजों से भी परेशान थीं। आने वाले परिवारों की कन्याएँ भी काफी संख्या में आती थीं; वे इस सत्संग को सुनने के बाद अब मांसाहार, मद्यपान तथा लहसुन-प्याज़ का प्रयोग छोड़ चुकीं थीं और वे पुरुषों के वासनात्मक दृष्टिकोण को अब बहुत ही बुरा मानने लगीं थीं। उन्होंने अब फैशन को छोड़ सादगी अपनाई थी। उनकी अब ऐसी धारणा बन गई थी कि नारी को अपने आध्यात्मिक कल्याण के लिये भी कुछ करना चाहिए और पुरुष के लिए 'भोग की गुड़िया' ही नहीं बने रहना चाहिए।

उस समय की सामाजिक अवस्था और पिताश्री द्वारा दी गयी शिक्षा

दादा लेखराज, जिन्हें वे सम्मान से 'पिताश्री' कहती थीं, के द्वारा तो नर और नारी दोनों को यह शिक्षा मिलती थी कि वे भोग-विलासमय जीवन से मुक्ति प्राप्त कर, संयम-नियम के जीवन को अपनाकर, सच्चा सुख पायें। उनका यह दृष्टिकोण था कि नर और नारी गृहस्थ रूपी रथ के दो पहिये हैं; अत: यदि दोनों ही दिव्यता एवं योग मार्ग को अपनायें तो बहुत ही उत्तम होगा परन्तु उनकी यह कल्याणेच्छा उस समय पूरी नहीं

हो सकी। जो लोग उन दिनों सिन्ध में रहते थे अथवा वहाँ कभी गये थे, वे जानते हैं कि तब सिन्ध के लोगों में मांस, मदिरा, अण्डे, प्याज़, लहसुन का आम रिवाज़ था। विशेषकर जो लोग नौकरी पेशा (आमिल वर्ग) वाले थे अथवा जो व्यापारी (भाई-बन्ध), व्यापार के लिए विदेश जाया करते थे, वे तो इन पदार्थों के बिना शाकाहारी भोजन को 'घास' खाने के तुल्य मानते थे। यों तो समूचे भारत में ऐसी विचारधारा फैलने लगी थी परन्तु सिन्ध प्रान्त तो इसका पूरा शिकार हो चुका था।

इसके अतिरिक्त, उस काल में विधवाओं की हालत भी बड़ी अजीब होती थी। पति के मरने पर उन दिनों सिन्ध में सती की रस्म का विशेष प्रचलन नहीं था परन्तु विधवा नारी को कई महीनों तक लगातार रोते ही रहना पड़ता था। दिन-भर में जब कोई माता या मित्र-सम्बन्धी शोक प्रगट करने आते, विधवा के लिए टसवे बहाना ज़रूरी होता था। घूँघट की तो वहाँ प्रथा पूरे ज़ोर पर थी ही परन्तु, इस पर भी विधवा को अपने कपड़े, सरसों के तेल से सना कर तथा मैले कर के ही पहनने होते थे। ऐसा उसे बहुत दीर्घ अवधि तक, बल्कि जीवन-पर्यन्त करना होता था। लोग विधवा को 'अभागिन' तो मानते ही थे साथ ही वे किन्हीं अवसरों पर उसके आगमन को अपशगुन (Bad Omen) भी मानते थे। गोया समाज में उसका स्थान बहुत निम्न कोटि का होता था और वह स्वयं तथा उसके निकटतम कुटुम्बी भी उसके कारण दु:खी रहते थे।

कन्याओं-माताओं को आभूषण भी विचित्र प्रकार के पहनाये जाते थे। माताओं के कानों में बहुत-सी बालियाँ और नाक से बोझिल ज़ेवर लटकते थे। गोया अजीब-सा जीवन था! पुरुष वर्ग नारी को 'पाँव की जूती' ही समझता था। उनकी निजी मान्यता को कोई मूल्य नहीं दिया जाता था बल्कि यह कहावत आम थी कि नारी की अक्ल (बुद्धि) तो उसकी खोपड़ी में न होकर 'उसके वाम पाँव की एड़ी में होती है'। प्रचलित धार्मिक मान्यताओं के अनुसार पति ही को नारी के लिए 'परमेश्वर' और 'गुरु' माना जाता था, चाहे वह आहार, व्यवहार, विचार तथा आचार की दृष्टि से भ्रष्ट ही क्यों न हो!

अतएव कुछ समय पवित्र आहार, व्यवहार, आचार की शिक्षा लेने के बाद भोग-प्रिय पुरुषों का सामना होना स्वाभाविक था और जो पण्डे-पुजारी-पुरोहित,

पति को नारी का 'परमेश्वर' और गुरु को भी परमेश्वर बताने का कार्य करते चले आ रहे थे, उनकी ओर से भी विरोध होना बिल्कुल स्वाभाविक था।

पुरुषों का नारियों पर आतंक और अनुचित बन्धन

हुआ भी ऐसे ही। नारी को 'दासी' एवं 'भोग्या' मानने वाले पुरुषों ने अपने-अपने घर में उन-उन नारियों पर अत्याचार करना शुरू कर दिया. जिन्होंने 'विषय के कुठाराघात' (Sex-assault) से छुट्टी मांगी अथवा शराब-माँस को हाथ लगाने से सविनय इन्कार किया, यद्यपि वे घर का सारा काम-काज करतीं तथा पति की सेवा करना अपना कर्त्तव्य मानतीं परन्तु वासना की गुड़िया बने रहने से इन्कार करने पर उन पर वह मार पड़ी कि भगवान ही बचाये! कई-एक को लात मार कर घर से बाहर किया गया। उनके ज़ेवर उतार कर उनका स्त्री-धन भी काबू में करके, उनके हाथ में एक कौड़ी दिये बिना उनसे घर में रहने का अधिकार भी छीन लिया गया और उन्हें तिरस्कृत करके, निस्सहाय हालत में बाहर कर दिया गया!! अवश्य ही वे पुरुष तो यह समझे बैठे थे कि विवाह 'वासना-पूर्ति' के लिए लाइसेंस (Licence) है और पुरुष जब-कभी भी चाहे नारी से अपनी मनमानी करे; नारी तो विवाह होने पर तन, मन, धन से पुरुष के हाथ बिक चुकी होती है, अथवा उसकी इच्छाओं की दासी ही होती है। अत: जिसे वह 'अबला' मानता चला आ रहा था, उस द्वारा अब सम्भोग के लिए इन्कार करते सुन कर उसकी क्रोधाग्नि प्रज्वलित होनी ही थी। फिर, शास्त्रों द्वारा वह यह जो सुनता चला आ रहा था कि 'नारी को मार-पीट कर वश में रखना चाहिए' अथवा कि नारी, ढोल, गँवार, शूद्र और पशु की तरह, ताड़ना पाने की अधिकारिणी है, अब उस द्वारा नारी पर प्रहार होना स्वाभाविक ही था। अत: कई घरों में, दादा लेखराज द्वारा ईश्वरीय प्रवचन सुनने वालों के मुख में ज़बरदस्ती माँस डालने की कोशिश की गई। उनसे पतियों ने 'घोर युद्ध' करके भी वासना-भोग करने की कोशिश की। वासना, आक्रोश और आतंक के सामने डटे रहने पर उन्हें ऐसी-ऐसी यातनाएं दी गईं जो शायद अंग्रेज़ सरकार ने भी स्वतंत्रता के संग्राम में भाग लेने वालों को नहीं दी होंगी। उनका यदि यहाँ उल्लेख करें तो पाठकों के हृदय काँप उठेंगे। वह तो एक अलग ही लम्बी दास्तान है जिसका अलग ही विस्तृत वर्णन हो सकता है। सम्भोग की बात को लेकर नारियों पर

अत्याचार करने के लिये उकसाने में साधु और पुजारी वर्ग ने भी अपने हाथ रंगे। हाय, कन्याओं-माताओं पर अत्याचार कराने में भी उन्हें संकोच नहीं हुआ। वे, जो नारी वर्ग को वेद पढ़ने के लिए अनाधिकारी मानते आये हैं तथा नारी को शूद्र की तरह 'अपवित्र' मान कर उसे कभी भी उच्च आध्यात्मिक दर्जे के योग्य नहीं मानते रहे, अब कन्याओं-माताओं को महान् बनते हुए देख सकने में अपने को असमर्थ अनुभव करते होंगे और ईर्ष्या के कारण उत्तेजित होंगे, तभी तो उन्होंने भी माताओं के पवित्र बनने का मार्ग रोकने के लिए पुरुषों को उकसाया।

परन्तु समय बड़ा बलवान है। भगवान, जिनकी साधना में ये कन्याएँ-माताएँ इतना त्याग करने के लिये तथा यातनाएं सहने के लिए तैयार थीं, वे तो सर्व-समर्थ हैं ही। फिर ज्ञान और योग भी तो मनोबल को बढ़ाते ही हैं। अत: ये कृतसंकल्प कन्याएँ-माताएँ अपने लक्ष्य से एक कदम भी पीछे नहीं हटीं। इन्होंने फैशन और सजधज को सदा के लिए छोड़ कर श्वेत वस्त्र पहन लिए और 'त्याग, तपस्या तथा सेवा' को अपना सम्बल बना कर यह प्रतिज्ञा कर ली कि – "अब हम वासना की जंजीरों से मुक्ति पा कर ही दम लेंगी; हम समाज को प्राचीन देवियों और शक्तियों का कृत्य पुनरावृत्त कर के दिखायेंगी और जिस पुरुष वर्ग ने हम पर अत्याचार किया है, हम उसके प्रति भी पवित्र स्नेह तथा कल्याण की भावना लेकर देश में आध्यात्मिक क्रान्ति लायेंगी।

नारी मुक्ति के लिए अलौकिक संस्था की स्थापना

उन कन्याओं और माताओं को इस प्रकार दृढ़ प्रतिज्ञ देख कर पिताश्री ने अपनी लाखों की चल और अचल सम्पत्ति (Moveable and Immoveable Property), इन्हीं कन्याओं-माताओं का एक ट्रस्ट (Trust प्रन्यास) बना कर, उन्हें समर्पित कर दी। नहीं, नहीं, उन्होंने स्वयं को भी सेवार्थ समर्पित कर के 'वन्दे मातरम्' का नारा लगाया। इस प्रकार सच्चे अर्थों में नारी मुक्ति के लिए विश्व में पहली ऐसी संस्था की स्थापना हुई और उसके लिए निमित्त बने एक पुरुष– 'पिताश्री' अथवा दादा लेखराज – जिन्होंने इसके लिए समाज का कड़ा विरोध और तिरस्कार भी सहन किया तथा जिन्होंने अपना सर्वस्व इस कार्य में लगा दिया।

इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय की कार्य विधि

आज ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय विश्व-भर में एक ही ऐसी महिला-संस्था है जिसमें लगभग 10 हज़ार कन्याओं-माताओं ने अपना जीवन दान किया हुआ है। यह अकेली ही ऐसी महिला-संस्था है जिसमें पुरुष-वर्ग भी उनका सहयोगी है। कितने ही पुरुषों ने भी पवित्रता की स्थापना के इस शुभ कार्य में महिलाओं की इस संस्था को अपना तन-मन-धन समर्पित किया हुआ है। वे कन्याएँ-माताएँ और उनके अतिरिक्त अपने व्यवसायिक जीवन और गृहस्थ जीवन के कर्त्तव्यों को निभाने वाले अन्य लाखों पुरुष और महिलाएँ भी इन जीवन दान करने वाली महिलाओं (बहनों) की आज्ञानुसार कार्य करते हैं। वे न केवल इन्हें अपनी 'बहनें' मानते हैं बल्कि इन्हें अतुल सम्मान देकर इनके निर्देशानुसार चलते हैं। इसका समूचा कार्य महिलाएँ ही पुरुषों (भाइयों) के सहयोग से चलाती हैं परन्तु कहीं भी आपको यहाँ गुरुडम (Gurudom ; Bossism) देखने को नहीं मिलेगा। यह पहली और एक-मात्र ऐसी संस्था है जहाँ बहनें (महिलाएँ) ही सब केन्द्रों पर राजयोग सिखातीं तथा ईश्वरीय ज्ञान सिखातीं हैं वरना अब तक तो यह अधिकार सदा पुरुष वर्ग (संन्यासी या पण्डितों) ही को प्राप्त रहा है।

फिर, यद्यपि इस संस्था द्वारा 'नारी मुक्ति' का कार्य हो रहा है परन्तु इसके कार्य-कर्त्ताओं में पुरुषों के प्रति रंच-मात्र भी कटुता, घृणा या द्वेष की भावना नहीं है। बल्कि जितनी संख्या में माताएँ-कन्याएँ यहाँ वासना-मुक्ति तथा स्वतन्त्रता का लाभ ले रहीं हैं, लगभग उतनी ही संख्या में पुरुष भी लाभ उठा रहे हैं। आध्यात्मिक शिक्षा के द्वारा नारी को नर के बराबर स्थान दिलाने का यह कार्य देखने योग्य है। इसका मूल उद्देश्य मानव का दृष्टिकोण बदलना तथा ठीक सामाजिक मूल्यों को स्थापन करना है। इस कार्य-विधि द्वारा एक ऐसे समाज की स्थापना हो रही है जिसमें नारी को श्री लक्ष्मी के समान स्तर मिलेगा। दोनों एक-दूसरे के सहयोगी होंगे और दोनों दिव्य मर्यादा का पालन करते होंगे। दोनों में खींचतान नहीं होगी बल्कि अगाध स्नेह होगा और एक-दूसरे के प्रति सम्मान भाव भी होगा। नारी *'देवी'* के पद पर आसीन होगी और नर *'देवता'* के पद पर।

आसुरी वृत्तियों का, शोषण का, एक-दूसरे के प्रति वासना का यहाँ स्थान ही नहीं होगा।

इस कार्य से नारी-मुक्ति तथा समाज कल्याण के कार्य के ठोस परिणाम

इस प्रकार यह जो कार्य यहाँ हो रहा है, इससे घर-घर से न केवल नारी-शोषण का अन्त हो रहा है, बल्कि नारियों की छेड़छाड़ (Eve-teasing) का भी स्वत: ही उतने अंश में हल हो रहा है, जितनी संख्या में लोग यहाँ आ रहे हैं। युवक और युवतियाँ फैशन, नावल, कैबरे डाँस (Cabaret), अश्लील साहित्य (Pornographic Literature) इत्यादि से मुक्त होकर एक स्वच्छ (न कि स्वच्छन्द) समाज का निर्माण करने में लगे हैं। बहुत-सी बुराइयों से छूटने के कारण उनका आर्थिक स्तर भी ऊंचा हो रहा है और अब उन घरों में नारी को 'दासी' का स्थान मिलने की बजाय 'गृह-स्वामिनी' का स्थान प्राप्त हुआ है। इस प्रकार इस शिक्षा द्वारा 'सती प्रथा', दहेज इत्यादि समस्याओं का एक-सा ही, कानून के डण्डे के बिना ही यहाँ हल हो रहा है।

इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय के कार्य द्वारा बाल-विवाह की समस्या तो ऐसे गुम हो गई है जैसे गधे के सिर से सींग। जो परिवार यहाँ आते हैं, उनके सदस्य – नर और नारी – कभी बाल-विवाह जैसा कुकृत्य करने का स्वप्न भी नहीं देख सकते क्योंकि उन्हें गुड्डे-गुड़िया के विवाह की इस कुरीति के पापों का परिचय मिल जाता है।

यहाँ आने वाली कन्याएँ और नारियाँ जैसा सादा-सफेद कपड़ा पहनती हैं, उससे फैशन की बीमारी का अन्त हो जाना तो स्वाभाविक ही है। जब बनावटी सजधज, केशों का शृंगार, सोने-चाँदी के अलंकार और फैशन ही नहीं रहा तो छेड़-छाड़ (Eve-teasing) की गुँजायश ही कहाँ रही? परन्तु खेद यह है कि आज कई नारियाँ भी इस सादगी की आलोचना करती सुनी जातीं हैं क्योंकि आज पुरुषों के बहकावे और अशुद्ध वातावरण के प्रभाव में आकर वे भी दिखावे को महत्त्व देती हैं चाहे देश का युवा वर्ग फैशन के परिणामस्वरूप विचलित एवं

गुमराह क्यों न हो!

इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय की शिक्षाओं पर चलने वाले लोग, जिन्हें अपने ऐसे पुत्रों या पुत्रियों का विवाह कराना होता है जो ज्ञान-ध्यान की बात सुनने की रुचि ही नहीं रखते, वे भी दहेज और लेनी-देनी की कुप्रथा से बच कर रहने का प्रयत्न करते हैं। फिर, यहाँ जो विधवा माताएँ आती हैं, उन्हें भी 'योग' का सम्बल मिल जाने से उनके जीवन में इतनी खुशी होती है कि जैसे किसी सच्चे 'योगी' को ज्ञान-धन और ईश्वरीय आनन्द प्राप्त होने से होती है। कितनी ही नारियाँ, जिनके मन में तनाव रहता था, जो ससुराल या पति के व्यवहार से इतनी तंग थीं कि अपने हाथों, जीवन जैसी अनमोल चीज़ का भी अन्त करने (हत्या करने) को तैयार थीं, अब उन्हें कैसी स्थाई शान्ति मिली है, यह उन्हीं के मुख से उनका अनुभव सुनने से मालूम हो सकेगा। अत: कितनी ही नारियाँ (पुरुष भी) स्व-हत्या (Suicide) के जघन्य पाप से बच जातीं हैं।

पतिता नारियों और पतित पुरुषों का चारित्रिक सुधार

हम देखते हैं कि आज गर्भपात के लिए कानून तथा अवैध बच्चों के लिए व्यवस्था करने की बात को 'समाज कल्याण' का कार्य माना जा रहा है। कुछेक पथ-भ्रष्ट कन्याओं या नारियों को बुराई के अड्डों से निकाल कर उन्हें 'नारी निकेतनों' या 'नारी रक्षा गृहों' में लाने के कार्य को बहुत बड़ी सेवा माना जाता है। निस्संदेह पतिता नारियों को, चरित्रहीन लोगों के चंगुल से छुड़ाना एक सच्ची सेवा तो है परन्तु पतिता नारियों के भी चारित्रिक सुधार का कार्य यह ईश्वरीय विश्व विद्यालय कर रहा है। पतिता नारियाँ केवल वे ही नहीं हैं जो वेश्या की तरह धन्धा कर रही हैं बल्कि आज दृष्टि-वृत्ति तो लाखों-करोड़ों नर-नारियों की पतित हो चुकी है और गुप्त रूप में चरित्रहीन कर्म करने वाले नर-नारी तो समाज में एक अगण्य संख्या में हैं। पतिता होने से पहले ही किसी को पवित्रता का सहारा दे देना अथवा कृति द्वारा भ्रष्ट होने से पहले ही किसी की दृष्टि-वृत्ति सुधार देना– ये सेवा-कार्य अधिक जरूरी है। पुनश्च केवल नारी को पतित होने से बचाना तो सेवा है ही परन्तु जो पुरुष वर्ग उसे पतिता बनाने के हथकण्डे अपनाता है, उसे सुधारना तो बीमारी के कारण का निवारण करने-जैसा है। ऐसा ही कार्य यह

ईश्वरीय विश्व विद्यालय कर रहा है।

पुरुष के अनाचार, अत्याचार, भ्रष्टाचार, फिजूलखर्ची से मुक्ति

क्या वह नारी, जिसका सामाजिक या आर्थिक पद उच्च हो, सुखी होगी जिसका पति शराब पीकर घर आता है, जिसके सम्बन्ध अन्य नारियों से अनाचार पर आधारित हैं या जो क्रोध के वश अपना मानसिक संतुलन इतना तो खो बैठता है कि सारे घर का वातावरण असहनीय हो जाता है अथवा जो जुए, सट्टे या बीड़ी-सिगरेट पर ही अपनी कमाई का काफी हिस्सा फूँक डालता है? क्या वह नारी प्रसन्न होगी जिसका पति सदा अशान्त रहने के कारण छोटी-छोटी बात पर उसे डाँट देता है, उसकी इच्छा चाहे हो या न हो, उसे सम्भोग के लिए मजबूर करता व मारता-पीटता तक है, या जो घर के कार्य में उसे सहयोग देने की कभी चेष्टा तक भी नहीं करता? कदापि नहीं। ऐसे पुरुष वर्ग को सुधार कर, नारी-जीवन को पुरुष की उन्मत्तता से, आतंक से, अनाचार से, अत्याचार से, व्यभिचार से, फिजूलखर्ची से, बुरी आदतों से मुक्त करने का ठोस कार्य यह ईश्वरीय विश्व विद्यालय ही अपने 6500 से भी अधिक सेवाकेन्द्रों द्वारा कर रहा है।

पुरुष और नारी के बीच सम्बन्धों और दृष्टिकोण को ठीक करना

नारी, सरकारी नौकरी करके आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर हो जाय तो समस्या का समाधान नहीं हो जाता क्योंकि पुरुष और नारी के सम्बन्धों में परस्पर स्नेह-सम्मान, सहयोग-भावना और सहिष्णुता का होना अत्यन्त ज़रूरी है, वरना इनके बिना गृहस्थ जीवन रौरव नरक बन जाता है; स्नेह न हो तो नौकरी-चौकरी की बात को लेकर भी तू-तू, मैं-मैं हो सकती है। इन सम्बन्धों को श्रेष्ठ बनाने का कार्य यह ईश्वरीय विश्व विद्यालय कर रहा है। यदि घर में ऐसा तालमेल न हो और सतोगुण की धारा न बहती हो तो पुत्रों-पुत्रियों में वही संस्कार भर जाते हैं और बड़े होने पर फिर वे भी समाज के लिए समस्या बन जाते हैं और फिर समस्या का अन्त तो हो ही नहीं पाता।

गर्भपात (Abortion), अवैध बच्चों इत्यादि की घिनौनी बातें, जो अब समाज में होने लगी हैं, वह भी सदा के लिए निर्मूल हो जायेंगी यदि नर-नारी को

उनके कर्त्तव्यों तथा अधिकारों की शिक्षा मिले, उनके जीवन में दिव्यता लाई जाय, उनके दृष्टिकोण विशाल एवं पवित्र हों और उनमें शारीरिक आकर्षण के स्थान पर आत्मिक-स्नेह को स्थापित किया जाय। यही कार्य यहाँ ठोस रीति से हो रहा है।

आज 'नारी मुक्ति आन्दोलन' के नाम के अन्तर्गत कार्य करने की जो प्रणाली है, उसी में ही सुधार की आवश्यकता है। उदाहरण के तौर पर पति-पत्नी के बीच तलाक (Divorce) के कानून में कुछ परिवर्तन करने की चर्चा या नारी को नि:शुल्क कानूनी सुविधा (Free Legal Aid) की चर्चा सुनी जाती है। हाँ, कई परिस्थितियाँ ऐसी हो जाती हैं कि तलाक ज़रूरी हो जाता है परन्तु तलाक की बजाय दोनों को ऐसी शिक्षा देने की, जिससे उनका मानसिक तालमेल कायम हो जाय, यह सेवा कौन करेगा? बीमारी हो तब उसका इलाज करने की बात तो लोग सोच रहे हैं परन्तु बीमारी ही न हो इसका उपाय भी तो कोई करे। यथा-उपलब्ध साधनों के अनुसार यह सेवा भी ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय कर रहा है। इस कार्य को जो करने वाले हैं, उन्होंने अपना तन-मन-धन, समय-शक्ति सब-कुछ इसमें जुटा दिया है। इस कार्य को करने में उन्हें एक धुन लगी हुई है। उन्हें पद या मान की चाह नहीं बल्कि वे मार खातीं हुईं, बिलबिलाती हुईं माताओं को यथा-सम्भव सहायता करना चाहती हैं, उनके शील की रक्षा के लिए सहयोगी बनना चाहती हैं, उनके हो रहे शोषण का अन्त करना चाहती हैं। इसी कार्य में ही वे सर्वस्व रूप से समर्पित हैं, बल्कि इससे भी अधिक विशेष यह है कि वे नर और नारी को आत्मिक रूप में स्थित करके, उनमें दिव्यता भर कर, उन्हें प्रभु-परिचय द्वारा ईश्वरीय आनन्द का सौभाग्य प्राप्त कराने की सेवा में लगी हुई हैं। कितनी ऐसी महिला संस्थाएँ आज देश में हैं जिनके कार्यकर्त्ता इतनी संख्या में सम्पूर्ण रूप से समर्पित (fully dedicated) हैं? कितनी ऐसी महिला-संस्थाएँ हैं, जिन द्वारा पुरुषों का भी साथ-साथ कल्याण हो रहा हो?